बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 18 अंक 137

जीत की राह

दिल्ली सरकार ने राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर राज्य का प्रतिनिधित्व करने वाले पदक विजेता खिलाड़ियों को प्रोत्साहित करने के लिए भारी भरकम नकद पुरस्कार और सरकारी नौकरियां देने का निर्णय किया है। सरकार का यह कदम राज्य में स्वस्थ खेल संस्कृति विकसित करने का एक प्रयास है। मुख्यमंत्री खेल प्रोत्साहन योजना के अंतर्गत ओलिंपिक और पैरालिंपिक में स्वर्ण पदक विजेताओं के लिए पुरस्कार राशि 3 करोड़ रुपये से बढ़ाकर 7 करोड़ रुपये कर दी गई है। इसी तरह रजत पदक विजेताओं को अब 5 करोड़ रुपये और कांस्य पदक विजेताओं को 3 करोड़ रुपये मिलेंगे। एशियाई और पैरा एशियाई खेलों में स्वर्ण पदक विजेताओं को दिल्ली सरकार की ओर से 3 करोड़ रुपये, रजत पदक विजेताओं को 2 करोड़ रुपये और कांस्य पदक विजेताओं को 1 करोड़ रुपये की प्रोत्साहन राशि दी जाएगी। राष्ट्रमंडल खेलों में स्वर्ण पदक जीतने वालों को 2 करोड़ रुपये, रजत पदक विजेताओं को 1.5 करोड़ रुपये और कांस्य पदक जीतने वाले खिलाड़ियों को 1 करोड़ रुपये देने की घोषणा की गई है। राष्ट्रीय खेलों में दिल्ली का प्रतिनिधित्व करने वाले पदक विजेताओं को 11 लाख रुपये दिए जाएंगे।

यह कदम उत्साहजनक है लेकिन भारत के सबसे संपन्न राज्यों में से एक द्वारा खेलों पर भारी भरकम खर्च करने के निर्णय को पंजाब और हरियाणा जैसे पड़ोसी राज्यों के साथ रचनात्मक प्रतिस्पर्धी संघवाद के प्रयास के रूप में भी देखा जा सकता है। दिल्ली के इन पड़ोसी राज्यों में खिलाड़ियों का लगातार सहयोग किया जाता है और राष्ट्रीय तथा अंतरराष्ट्रीय खेलों में इसके उल्लेखनीय परिणाम भी मिले हैं। इन दोनों राज्यों के खिलाड़ियों ने 2024 पेरिस ओलिंपिक खेलों में भारत के कुल 22 पदकों में से 15 पदक जीते थे और भारत के 117 सदस्यीय दल में से 42 इन्हीं दोनों राज्यों के थे।

उदार नकद पुरस्कार और सरकारी नौकरियों का वादा कम से कम खेल को व्यवहार्य करियर विकल्प के रूप में देखने की आवश्यकता को देर से ही सही, मिली मान्यता को दर्शाता है। 'खेलो इंडिया' और 'टारगेट ओलिंपिक पोडियम स्कीम' (टॉप्स) जैसी केंद्रीय योजनाओं के साथ राज्य में अब शीर्ष स्तर के खिलाड़ियों के लिए पर्याप्त सहयोग उपलब्ध है। हालांकि, यह खर्च भारत में खेलों को मिलने वाली वित्तीय सहायता की प्रकृति में बड़े बदलाव को प्रतिबिंबित नहीं करता है जहां करदाताओं के पैसे और सार्वजनिक क्षेत्र की नौकरियों ने ही दशकों से भारत के अग्रणी खिलाड़ियों को सहारा दिया है। क्रिकेट या बैडमिंटन जैसे खेलों में सफल खिलाड़ियों को आकर्षक विज्ञापन अनुबंध मिल जाते हैं। इसलिए इन अपवादों को छोड़ दें तो भारतीय खेलों के लिए निजी कॉरपोरेट क्षेत्र से मिलने वाला धन अपेक्षाकृत कम है जबकि पश्चिमी देशों में यह सरकार की ओर से दी जाने वाली महत्त्वपूर्ण वित्तीय सहायता के पूरक की तरह है। यह विडंबना ही है कि एक ऐसा राज्य जिसके पास एशियाई खेलों और राष्ट्रमंडल खेलों की मेजबानी के कारण अंतरराष्ट्रीय स्तर की पर्याप्त खेल सुविधाएं उपलब्ध हैं, चैंपियन बनाने के मामले में पिछड़ा हुआ है। इसलिए दिल्ली सरकार के प्रयासों का कम से कम एक हिस्सा उपयुक्त खेल पारिस्थितिकी तंत्र और खेल संस्कृति विकसित करने पर भी खर्च किया जाना चाहिए। इसमें शहर भर में सरकारी धन से तैयार खेल सुविधाओं तक बेहतर पहुंच प्रदान करना शामिल होना चाहिए, जो फिलहाल तो राजनेताओं और अफसरशाही के कब्जे में दिखती हैं। एक कुख्यात मामला भी सुर्खियों में आया था जहां पालतू कुत्ते को घुमाने के लिए स्टेडियम से खिलाड़ियों को बाहर निकाल दिया गया था। पदक विजेताओं को पुरस्कृत करना प्रतिभाशाली खिलाड़ियों के लक्ष्य को ऊंचा, तेज और मजबूत बनने के लिए प्रोत्साहित करने का अच्छा तरीका है लेकिन जमीनी स्तर पर प्रतिभा को बढ़ावा देने में इसका सीमित प्रभाव पड़ेगा, खास तौर पर निम्न आय वर्ग के प्रतिभाशाली खिलाड़ियों के बीच। हरियाणा के पास कुछ दशक से इस प्रक्रिया को प्रबंधित करने का साबित मॉडल है। राज्य ने इच्छुक खिलाड़ियों के लिए सस्ते और आसानी से उपलब्ध सरकारी धन से तैयार बुनियादी ढांचे और कोचिंग सुविधाओं के साथ सामुदायिक और पारिवारिक भागीदारी को मिलाकर अनूठा वातावरण तैयार किया है जिसने पहलवानों, फुटबॉल और हॉकी खिलाड़ियों, मुक्केबाजों, तीरंदाजों और क्रिकेटरों की फौज पैदा की है। इनमें से कई महिलाएं हैं। पैसे का उत्पादक तरीके से उपयोग सुनिश्चित करने के लिए दिल्ली के खेल प्रतिष्ठान को पहले इस तरह की सर्वश्रेष्ठ प्रणालियों का अध्ययन करना चाहिए।

विनय सिन्हा

अमेरिकी दादागीरी के विरुद्ध साझेदारी की जरूरत

हमें ऐसे देशों की आवश्यकता है जो अमेरिका की मौजूदा सरकार के कदमों के विपरीत प्रभावों से निपटने के लिए सहयोग कर सकें। बता रहे हैं नितिन देसाई

करीब 80 वर्ष पहले अंतरराष्ट्रीय संगठन संयुक्त राष्ट्र की स्थापना की गई। उसके जिस चार्टर पर सहमति बनी उसने राज्यों के बीच संबंधों की वैधता को परिभाषित किया और संयम तथा पारस्परिक सम्मान को बढ़ावा देने वाली कूटनीतिक प्रथाओं की स्थापना की। दुनिया के देशों के व्यवहार का यह वैश्विक मानक कई अन्य अंतरराष्ट्रीय संस्थानों के चार्टर में भी नजर आया। एक स्तर तक यह बात इसके अस्तित्व के साढ़े चार दशकों तक सही भी रही जब अमेरिका और सोवियत संघ यानी यूएसएसआर के बीच तनाव था। बीते तीन दशक में चीन के उभार के साथ दुनिया बहुध्रुवीय हो चुकी है और देशों के बीच लड़ाइयां भी कुछ हद तक कम हो चुकी हैं।

हाल के वर्षों में विभिन्न देशों के बीच रिश्तों का संतुलन डगमगाया है और आधिकारिक जंगों में संयम कम हुआ है बल्कि गायब हो गया है। रूस और यूक्रेन के बीच भारी लड़ाई छिड़ी हुई है। गाजा में इजरायल ने एक तरह से नरसंहार को अंजाम दिया है और ईरान पर हमले किए हैं। एक और पुराना उदाहरण वर्ष 2003 में इराक पर अमेरिकी हमले का है और जिसे ब्रिटेन, ऑस्ट्रेलिया और पोलैंड का समर्थन था। 1991 की जंग की तरह इसे संयुक्त राष्ट्र की मंजूरी भी नहीं थी। जाहिर है बीते दशक में संयुक्त राष्ट्र की परवाह किए बिना जंगें छेड़ी गई हैं और आत्मरक्षा के नाम पर उसे सही ठहराया गया है क्योंकि संयुक्त राष्ट्र समझौता उसकी इजाजत देता है।

दूसरे विश्व युद्ध के बाद के दौर में विकास को गति देने के लिए सफलता का एक प्रमुख क्षेत्र राष्ट्रों के बीच व्यापार समझौता भी था। डॉनल्ड ट्रंप के नेतृत्व में अमेरिका उक्त वैश्विक व्यापार समझौते की परंपरा को नष्ट कर रहा है। परंतु इससे भी बुरी बात यह है कि संयम और राष्ट्रीय स्वतंत्रता के प्रति सम्मान का सख्त अभाव नजर आ रहा है। यह बात ईरानी राष्ट्रपति की हत्या करने की अमेरिका की क्षमता के बारे में ट्रंप के बयानों और ब्राजील के राष्ट्राध्यक्ष द्वारा पूर्व ब्राजीलियाई राष्ट्रपति जेयर बोलनसारो के साथ व्यवहार को लेकर उनकी आक्रामक टिप्पणियों में साफ नजर आया। दरअसल ट्रंप दूसरे राष्ट्र प्रमुखों के बारे में खराब टिप्पणियां करने में माहिर हैं। ट्रंप के कदमों पर प्रतिक्रिया देते वक्त अधिकांश देशों ने स्थापित नियमों से इस विचलन की अनदेखी कर दी। उनमें से कई तो कूटनीतिक सौजन्यता को यूं ठुकराए जाने को लेकर भी सहिष्णु बने रहे। अगर कोई मजबूत पड़ोसी अपनी मांगें सामने रखते हुए आपके साथ बुरा व्यवहार करता है और आप बदतमीजी को परे रखकर उसकी मांग पर प्रतिक्रिया देते हैं तो माना जाएगा कि आप उसे बर्दाश्त कर रहे हैं। ट्रंप की आक्रामकता को स्वीकार कर हम इस समय यही कर रहे हैं। अन्य देशों को परेशान करने वाले एक मजबूत और आक्रामक देश का प्रतिरोध करने के लिए क्या किया जा सकता है?

स्कूल में दूसरों को परेशान करने वाले बच्चे का उदाहरण लेते हैं। मेरे स्कूल में एक बच्चा था जो छुट्टी के समय एक जगह खड़ा हो जाता और किसी भी अकेले लड़के को बुलाकर उसके सिर पर चपत लगाता। लेकिन अगर वहां से बच्चों का कोई संगठित समूह गुजरता तो वह उनमें से किसी को बुलाने की हिम्मत नहीं कर पाता था।

इसी तरह आज हमें देशों के ऐसे समूह की आवश्यकता है जो मिलकर काम कर सकें और अमेरिका के विपरीत कदमों का प्रतिरोध कर सकें। विभिन्न देशों के आपसी रिश्तों के स्तर पर हम संयुक्त राष्ट्र या विश्व व्यापार संगठन अथवा अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष जैसे संगठनों द्वारा स्वीकृत कदमों पर निर्भर नहीं रह सकते। जवाब इस बात में छिपा है कि किन्हें 'इच्छुक देशों का गठबंधन' कहा जाए। यह विभिन्न देशों के एक समूह की पहलकदमी होती है जो ऐसी अंतरराष्ट्रीय पहल का समर्थन करते हैं जिन्हें संयुक्त राष्ट्र का औपचारिक समर्थन नहीं हासिल होता, जो आमतौर पर ऐसा एक या एक से अधिक ताकतवर देश के विरोध के चलते होता है। नब्बे के दशक से दो उदाहरण लिए जा सकते हैं। लोगों के विरुद्ध इस्तेमाल होने वाले बारूदी सुरंगों पर प्रतिबंध और अंतरराष्ट्रीय अपराध अदालत के गठन की सहमति के लिए समझौते। इन गठबंधनों को कनाडा और इटली ने आगे बढ़ाया था और इनमें अन्य सहमत देश शामिल थे। इससे ऐसे परिणाम निकले जिनका वैश्विक सहयोग पर सकारात्मक प्रभाव था। बहरहाल, भारत इन गठबंधनों में साझेदार नहीं था। ऐसे ही एक कदम को वर्ष2000 में संयुक्त राष्ट्र की सहमति नहीं मिल सकी। यह मामला था कर्ज माफी से संबंधित जुबिली डेट इनीशिएटिव का। इसे एक स्वयंसेवी संगठन ने पेश किया था और इसे ब्रिटेन का समर्थन हासिल था। बहरहाल संयोग से अब 2025 में एक नया जुबिली डेट इनीशिएटिव पेश किया गया है।

अमेरिकी दादागीरी का मुकाबला करने के लिए अंतरराष्ट्रीय राजनीति या वैश्विक अर्थव्यवस्था में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन लाने वाला इच्छुक देशों का प्रभावी गठबंधन, सामान्य उद्देश्यों के आधार पर नहीं बन सकता। व्यापार नीति के व्यवधानों के प्रत्युत्तर में इसका निर्माण असंभव है। ऐसे किसी गठबंधन द्वारा युद्ध के जोखिम कम करना भी लगभग असंभव है। अमेरिकी नीति में हालिया बदलावों का जवाब देने के लिए इसे अधिक विशिष्ट सहयोगात्मक कार्रवाइयों पर केंद्रित होना चाहिए।

मेरा पहला सुझाव दो कृषि शोध संस्थानों से संबंधित है जिन्होंने सकारात्मक वैश्विक प्रभाव डाला और अब उन्हें अमेरिका से पहले जैसा वित्तीय आवंटन नहीं मिल रहा है। एक है मेक्सिको स्थित अंतरराष्ट्रीय मक्का और गेहूं सुधार केंद्र तथा दूसरा फिलीपींस स्थित अंतरराष्ट्रीय चावल शोध संस्थान। अमेरिकी की वित्तीय मदद बंद होना एक बड़ी समस्या है और इसका असर उनकी गुणवत्ता पर हो सकता है। वे भारत समेत कई देशों में कृषि में सहयोग के प्रमुख स्रोत रहे हैं। भारत तथा अन्य लाभार्थी देश अमेरिका के प्रतिकूल निर्णय का मुकाबला करने के लिए अपना गठबंधन बना सकते हैं और अमेरिका द्वारा मदद बंद किए जाने की भरपाई कर सकते हैं।

दूसरा और शायद थोड़ा कठिन सुझाव है अमेरिका द्वारा कार्बन उत्सर्जन में कमी के वादे से पीछे हटने की भरपाई। अमेरिका पेरिस समझौते से पीछे हट गया है ऐसे में अमेरिका द्वारा वर्ष2030 के लिए किए गए उत्सर्जन कटौती के वादे को 40 फीसदी से कम करके 3 फीसदी कर दिया जाएगा। यानी 2030 में वादे की तुलना में कार्बन उत्सर्जन में 2 अरब टन की वृद्धि होगी।

इसमें सुधार के लिए अंतरराष्ट्रीय स्तर पर औपचारिक कार्रवाई संभव नहीं। ऐसे में कुछ प्रमुख देशों को एक गठबंधन बनाना होगा ताकि अमेरिका के पीछे हटने की कुछ हद तक भरपाई की जा सके। दो अरब टन की भरपाई करना संभव नहीं होगा लेकिन आंशिक भरपाई भी वैश्विक स्तर पर सहयोग को जारी रखेगी। भारत में यह क्षमता है कि वह 2030 तक कार्बन उत्सर्जन में कमी की अपनी क्षमता बढ़ाए और अन्य देशों के साथ मिलकर वैश्विक स्तर पर जलवायु परिवर्तन जोखिम को लेकर गठबंधन बनाए। कुछ साझा वैश्विक लक्ष्यों को हासिल करने के लिए इच्छुक देशों के कुछ गठबंधनों का उदय एक आंशिक समाधान होगा जो 80 वर्ष पहले बनी संभावनाओं को जीवित रखेगा। यह एक शक्तिशाली राज्य की दादागीरी खत्म नहीं कर सकता लेकिन उसके असर को कम कर सकता है। उम्मीद है कि यह अमेरिकी जनमत को भी प्रभावित करेगा कि उसकी सरकार को ऐसा व्यवहार करना चाहिए।

कोयला, स्वच्छ वायु, और स्वागत योग्य समाधान

बुनियादी ढांचा

विनायक चटर्जी

अपनी नीति में व्यापक परिवर्तन करते हुए पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय ने इसी माह 11 जुलाई को कोयला आधारित बिजली संयंत्रों में फ्लू गैस डीसल्फराइजेशन (एफजीडी) सिस्टम के लिए 2015 के अपने आदेश में संशोधन किया है। वैज्ञानिक अध्ययनों और हितधारकों से परामर्श के बाद नए दिशानिर्देश जारी किए गए हैं, जिनमें क्षेत्र-विशेष और साक्ष्य आधारित नियम बनाए गए हैं ताकि देश की जरूरतों और पर्यावरण प्राथमिकताओं के बीच संतुलन कायम किया जा सके।

नियमों में यह बदलाव वायु प्रदूषण पर दशकों की न्यायिक और नियामकीय कार्रवाई के बाद हुआ है। दिल्ली के वायु प्रदूषण को लक्षित करते हुए एमसी मेहता जनहित याचिका (1985) को थर्मल पावर प्लांट (टीपीपी) से होने वाले उत्सर्जन को शामिल करने के लिए विस्तारित किया गया, जिससे न्यायिक और नियामकीय जांच हुई। इसके बाद ही पर्यावरण मंत्रालय ने 2015 में अधिसूचना जारी कर 2017 तक सभी थर्मल प्लांट के लिए एफजीडी की स्थापना अनिवार्य कर दी। इन निमयों के तहत सल्फर डाइऑक्साइड उत्सर्जन की सीमा 600 से घटा कर 100 मिलीग्राम प्रति घन मीटर तक कर दी गई। इसका असर यह हुआ कि उच्च पूंजी लागत, तकनीकी बाधाओं और अस्पष्ट लागत वसूली का हवाला देते हुए सार्वजनिक और निजी बिजली उत्पादकों की ओर से 25 से अधिक याचिकाएं दाखिल की गईं। इनमें से कई ने टैरिफ पास-थ्रू शुल्क के लिए कानून में बदलाव तक की मांग भी उठाई। पर्यावरणविदों ने कानून को सख्ती से लागू कराने के लिए राष्ट्रीय हरित अधिकरण (एनजीटी) का रुख किया। इस पर एनजीटी ने मंत्रालय को निर्देश दिया कि मानदंडों का पालन नहीं करने वालों को नए टीपीपी के लिए पर्यावरण मंजूरी न दी जाए। इन कानूनी विवादों के साथ-साथ अतिरिक्त उत्पादन क्षमता की कमी और रेट्रोफिटिंग के लिए कामकाज बंद रखने की जरूरत के कारण मंत्रालय ने एफजीडी की समय-सीमा 2022 तक बढ़ा दी। वर्ष 2020 में बिजली उत्पादक संघ (एपीपी) ने उच्चतम न्यायालय में याचिका दायर कर इसका विस्तार 2024 तक करने की मांग की लेकिन इसे खारिज कर दिया गया। इस उठापटक के बीच एफजीडी स्थापना का काम काफी पिछड़ गया। अप्रैल 2021 में पर्यावरण मंत्रालय ने नियमों में संशोधन करते हुए 2015 वाली अधिसूचना को तीसरी बार रद्द कर दिया और टीपीपी को तीन समूहों में वर्गीकृत किया:

श्रेणी ए: राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र या 10 लाख से अधिक आबादी वाले शहरों के 10 किलोमीटर के भीतर टीपीपी के लिए समय-सीमा दिसंबर 2022 तक।

श्रेणी बी: गंभीर रूप से प्रदूषित क्षेत्रों/प्रदूषण नियंत्रण लक्ष्यों में पिछड़े शहरों के 10 किलोमीटर के दायरे में टीपीपी के लिए समय-सीमा दिसंबर 2023 तक।

श्रेणी सी : अन्य सभी टीपीपी के लिए समय-सीमा दिसंबर 2024 तक।

वर्ष 2022 में केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड ने ए, बी और सी श्रेणी के टीपीपी के लिए यह समय-सीमा क्रमशः 2024, 2025 और 2026 तक बढ़ाई थी। इस वर्ष अप्रैल में सर्वोच्च न्यायालय ने दिल्ली के आसपास के टीपीपी की समीक्षा की जिसमें नियमों के अनुपालन संबंधी खामियां पाई गईं। अदालत ने फटकार लगाते हुए पूर्व में बढ़ाई गई समय-सीमा रद्द कर दी और सरकार को निर्देश दिया कि वह नियमों का पालन नहीं करने वाले 9 संयंत्रों को फौरन नोटिस जारी करे।

इस बीच, एफजीडी नीति का पुनर्मूल्यांकन शुरू किया गया। इसके बाद ही 11 जुलाई वाले संशोधित दिशानिर्देश आए। नए नियमों में केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के 2022 के टीपीपी वर्गीकरण को तो बरकरार रखा गया लेकिन एफजीडी स्थापना और समयसीमा में कुछ ढील दी गई। नई व्यवस्था में चिह्नित किए गए 537 संयंत्रों में से श्रेणी ए में वर्गीकृत केवल 65 इकाइयों को अब 31 दिसंबर, 2027 तक एफजीडी स्थापित करना होगा। श्रेणी बी में शामिल 66 संयंत्रों की अलग-अलग स्थिति देखकर निर्णय लिया जाएगा, जबकि श्रेणी सी के 406 संयंत्र यदि स्टैक ऊंचाई के मानदंडों को पूरा करते हैं तो उन्हें इससे छूट दी गई है। खास बात यह कि सल्फर डाइऑक्साइड उत्सर्जन सीमा में परिवर्तन नहीं किया गया। ये 2015 के मानकों के अनुरूप ही हैं।

भारत घरेलू कोयले पर बहुत अधिक निर्भर है। देश की लगभग 92फीसदी बिजली का उत्पादन कोयले से ही होता है और फिलहाल इसमें कोई बड़ी कमी होने का अनुमान नहीं है। नैशनल इंस्टीट्यूट ऑफ एडवांस्ड स्टडीज की सितंबर 2024 की रिपोर्ट के अनुसार, टीपीपी में उपयोग किए जाने वाले कोयले में आमतौर पर राख की मात्रा अधिक (वजन के हिसाब से 35-45 फीसदी) और सल्फर कम (0.2-0.7 फीसदी) होती है। अमेरिकी कोयले (1-1.8 फीसदी) और चीनी कोयले (1 फीसदी से अधिक) के सल्फर के मुकाबले यह मात्रा काफी कम है। इसलिए भारतीय कोयले को 'बहुत कम सल्फर वाला कोयला' माना जाता है। आईआईटी दिल्ली द्वारा मई 2024 में किए गए एक सर्वेक्षण से पता चला कि सभी शहरों में, जिनमें बिना एफजीडी वाले कोयला संयंत्र भी हैं, सल्फर डाइऑक्साइड का स्तर राष्ट्रीय परिवेशी वायु गुणवत्ता मानक सीमा 80 माइक्रोग्राम प्रति घन मीटर के भीतर रहा। अध्ययन में पाया गया कि भारत में क्षारीय धूल और तटीय समुद्री हवाओं की उपस्थिति के कारण अम्लीय वर्षा कोई बड़ी चिंता का विषय नहीं है। भारत में एफजीडी स्थापित करने का काम बहुत धीमा रहा है।

रेट्रोफिटिंग के लिए चिह्नित 537 टीपीपी में से केवल 44 टीपीपी (केंद्रीय 17, राज्य 8 और निजी 19) ने ही एफजीडी लगाए हैं। इसकी स्थापना में 1.2 करोड़ रुपये प्रति मेगावॉट की अनुमानित लागत के हिसाब से कुल पूंजी परिव्यय 96,000 करोड़ रुपये तक पहुंच सकता है। कई पुराने टीपीपी एफजीडी की स्थापना पर किए गए इस भारी-भरकम खर्च को निकालने के लिए जूझ रहे हैं। एफजीडी लागत का बोझ उपभोक्ताओं पर डाला गया तो बिजली की कीमतें 0.30 से 0.40 रुपये प्रति यूनिट तक बढ़ जाएंगी। ऊर्जा विशेषज्ञ इसी महीने जारी संशोधित दिशानिर्देशों की चार कारणों से सराहना कर रहे हैं: पहला, नए दिशानिर्देशों में यह माना गया है कि टीपीपी से सल्फर डाइऑक्साइड प्रदूषण पहले जितनी आशंका जताई गई थी, उससे कम खतरनाक है। दूसरा, यह सभी के लिए एक ही प्रकार के नियम के बजाय एक स्तरीय अनुपालन तंत्र लागू करता है। तीसरा, उच्च बिजली शुल्क का भुगतान नहीं करने से उपभोक्ताओं को लाभ होता है। चौथा, यह केंद्र-राज्य और निजी बिजली उत्पादकों का काफी पूंजीगत व्यय बचाता है, जिससे हरित पहलों समेत तमाम उच्च-प्रभाव वाले निवेश के लिए काफी धन बच जाता है।

इससे दीर्घकालिक स्थिरता लक्ष्यों को बेहतर ढंग से अंजाम देने में मदद मिलती है। एक बात और, इस निर्णय से भारत का मकसद वैश्विक स्तर पर यह स्पष्ट संदेश देना है कि वह उच्च-सल्फर कोयले के लिए पश्चिमी तर्ज पर बनाए गए पर्यावरण दिशानिर्देशों को आंख मूंद कर नहीं अपनाएगा। इसके बजाय, यह क्षेत्र-विशिष्ट, साक्ष्य-आधारित रणनीति अपना रहा है, जो जलवायु और आर्थिक हितों के साथ वायु गुणवत्ता लक्ष्यों से संतुलन बनाती दिखती है। स्पष्ट रूप से, इसे पीछे हटना नहीं कह सकते, बल्कि इसमें नियामकीय परिपक्वता, वैज्ञानिक ईमानदारी और तर्कसंगत राष्ट्रीय हितों के प्रति प्रतिबद्धता झलकती है।

(लेखक बुनियादी ढांचा विशेषज्ञ हैं। वह द इन्फ्राविजन फाउंडेशन के सह-संस्थापक और प्रबंध न्यासी भी हैं)

आपका पक्ष

पश्चिमी मीडिया की अदूरदर्शी सोच

अमेरिकी प्रतिनिधि सभा की विदेश मामलों की समिति द्वारा 'द रेजिस्टेंस फ्रंट' (टीआरएफ) को वैश्विक आतंकवादी संगठन घोषित करना भारत के लिए एक महत्त्वपूर्ण कूटनीतिक सफलता है। यह न केवल भारत की वर्षों से उठाई जा रही चिंताओं को अंतरराष्ट्रीय मान्यता देता है बल्कि पाकिस्तान समर्थित आतंकवाद के विरुद्ध वैश्विक मंच पर स्पष्ट संदेश भी है। निर्दोष नागरिकों का कत्लेआम करने वाले संगठनों के बारे में इस तरह की सोच से यह समझ जा सकता है कि अब अमेरिका आतंकवाद के प्रति अधिक कठोर और स्पष्ट नीति अपना रहा है। हालांकि इस सकारात्मक घटनाक्रम के बावजूद एक बड़ी चुनौती यह भी है कि पश्चिमी मीडिया अब भी भारत की आतंकवाद-रोधी नीतियों को पक्षपाती नजरिये से देखती हैं। टीआरएफ जैसे संगठनों को 'घरेलू विद्रोह' बताना न केवल वास्तविकता से मुंह मोड़ना है बल्कि अंतरराष्ट्रीय सुरक्षा चिंताओं को भी नजरअंदाज करना है। ऐसे में अमेरिकी संसद की यह कार्रवाई भारत को वैश्विक आतंकवाद के खिलाफ अपनी स्थिति मजबूत करने का एक अवसर प्रदान करती है। इससे न केवल पाकिस्तान का दोहरा चरित्र उजागर हुआ है बल्कि भारत की सुरक्षा चिंताओं को वैश्विक समर्थन भी मिला है। अब जरूरत इस बात की है कि यह वैश्विक समर्थन जमीनी धरातल पर असर कारक सिद्ध हो ताकि आतंकवाद का सफाया हो सके।

अमृतलाल मारू, इंदौर

अमेरिका द्वारा 'द रेजिस्टेंस फ्रंट' को वैश्विक आतंकवादी संगठन घोषित करना भारत के लिए कूटनीतिक सफलता है

गांवों में सहकारी समिति गठन से पारदर्शिता आएगी

हाल ही में तैयार राष्ट्रीय सहकारिता नीति 2025 ग्रामीण अर्थव्यवस्था को नए सिरे से गतिशील करेगी। इस नीति के अनुसार प्रत्येक गांव में एक सहकारी समिति नियमानुसार गठित होगी। किसानों, महिलाओं, वंचितों, जन जातियों आदि सभी के लिए यह वरदान साबित हो सकती है। वर्ष 2047 के विकसित भारत की सिद्धि के लिए यह एक स्पष्ट दिशा है। यह जमीनी स्तर का कार्य है, जिसमें अफसरशाही का भी दखल नहीं होगा। समिति के गठन व संचालन की प्रक्रिया में पारदर्शिता होगी। परंतु व्यावसायिक दृष्टिकोण अवश्य होगा। इसमें आत्मनिर्भर भारत की भावना भी उजागर होगी। इसमें बंधुत्व की भावना प्रधान होने से यह राजनीतिक हस्तक्षेप से भी मुक्त होगी। अतीत में हर क्षेत्र की समितियों को ऐसे हस्तक्षेप का सामना करना पड़ा है।

हिम्मत जोशी, नागपुर

बारिश से देश के कई हिस्सों में हाल बेहाल

विगत दिनों देश के कई हिस्सों में हुई बारिश से लोगों का हाल बेहाल हो गया है। राजधानी दिल्ली में एक दिन में 50 मिमी की बारिश से ही कई जगहों पर सड़कें डूब गईं। जिसके कारण लोगों को दफ्तर जाने में काफी परेशानियों का सामना करना पड़ा। वहीं पानी से भरे सड़क पर वाहन ले जाने के कारण कई लोगों के वाहन भी खराब हो गए। बारिश से होने वाली समस्याओं और जलभराव वाले क्षेत्रों में जल निकासी की समुचित व्यवस्था करनी चाहिए।

मोहित कुमार, नई दिल्ली

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिज़नेस स्टैंडर्ड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in
पत्र/ईमेल में अपना डाक पता और टेलीफोन नंबर अवश्य लिखें।

देश-दुनिया

फोटो - पीटीआई

रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन (डीआरडीओ) ने ड्रोन से दागी जाने वाली एक मिसाइल का आंध्र प्रदेश के कर्नूल में सफल परीक्षण किया। यह मिसाइल पहले डीआरडीओ द्वारा विकसित यूएलपीजीएम-वी2 का उन्नत संस्करण है। इस मिसाइल को एक मानवरहित वायु यान (यूएवी) से छोड़ा गया जो बेंगलूरु की भारतीय स्टार्टअप 'न्यूस्पेस रिसर्च टेक्नॉलजीज' द्वारा स्वदेशी रूप से विकसित किया गया है।

दैनिक जागरण
एकाग्रता के आते ही सफलता निश्चित हो जाती है

जहां निर्माण, वहां भ्रष्टाचार

राजस्थान के झालावाड़ में एक सरकारी स्कूल का जर्जर भवन गिरने से कई बच्चों की मौत होना और अनेक का गंभीर रूप से घायल हो जाना यह बताता है कि अपने देश में सरकारी भवनों के निर्माण और उनकी देखरेख में कितनी अधिक लापरवाही बरती जाती है। इस तरह की घटनाएं देश के विभिन्न हिस्सों में रह-रहकर होती ही रहती हैं। जब किसी घटना में जनहानि होती है तो शोक जताने के साथ जांच, कठोर कार्रवाई करने की खूब बातें होती हैं, पर नतीजा ढाक के तीन पात वाला रहता है। चूंकि ऐसी ज्यादातर बातें दिखावटी होती हैं, इसलिए घटना-दुर्घटना की तह तक कभी नहीं जाया जाता और न ही जिम्मेदार लोगों को समय रहते ऐसा दंड दिया जाता है, जिससे अन्य सबक सीखें। झालावाड़ की घटना पर भी कहा जा रहा है कि स्कूल का भवन गिरने की घटना को बहुत गंभीरता से लिया गया है। खुद मुख्यमंत्री ने घटना का संज्ञान लिया है। शिक्षा विभाग ने आदेश जारी किया है कि जर्जर हो गए स्कूलों में बच्चों को न बैठाएं। क्या ऐसा आदेश जारी करने के लिए झालावाड़ की घटना का इंतजार किया जा रहा था? शिक्षा निदेशक ने प्रदेश भर के जर्जर स्कूली भवनों की रिपोर्ट मांग ली है। क्या उन्हें नहीं पता था कि राजस्थान में सरकारी स्कूलों की कई इमारतें जर्जर हैं और उनमें बच्चों का पढ़ना जानलेवा साबित हो सकता है? क्या ऐसे अधिकारियों के खिलाफ कड़ी कार्रवाई सुनिश्चित की जाएगी?

यदि यह सच है कि झालावाड़ के जर्जर स्कूली भवन की मरम्मत के लिए पैसा स्वीकृत हो गया था, लेकिन फाइल अटकी पड़ी थी तो यह भी एक तरह की आपराधिक लापरवाही है। बात केवल राजस्थान के झालावाड़ के खस्ताहाल स्कूली भवन की ही नहीं है। देश में न जाने कितने सरकारी भवन ऐसे हैं, जो जर्जर हैं। आए दिन सरकारी भवनों की खस्ताहाल स्थिति के साथ सड़कों के धंसने, पुलों के गिरने की खबरें आती ही रहती हैं। ऐसा इसलिए है कि जहां निर्माण, वहां भ्रष्टाचार भारत की एक कटु सच्चाई है। सरकारी निर्माण मानकों की अनदेखी करके किया जाता है। इसका मूल कारण भ्रष्टाचार है। हर तरह के सरकारी निर्माण में रिश्वत का बोलबाला है। नेता-नौकरशाह इसके बारे में सब जानते हैं। कई बार तो वे खुद कमीशनखोरी में शामिल रहते हैं। दुखद यह है कि कोई भी हालात बदलने के लिए तैयार नहीं। केवल निर्माण में ही भ्रष्टाचार नहीं है। इसके साथ-साथ इमारतों, सड़कों, पुलों आदि की देखरेख और उनकी मरम्मत में भी घोटाले होते हैं। सरकारी निर्माण में भ्रष्टाचार की बीमारी इतनी अधिक बढ़ गई है कि अब वह निजी क्षेत्र में भी घुस गई है। आम लोग भी मानकों की अनदेखी कर और कई बार तो भ्रष्ट अधिकारियों को पैसे देकर निर्माण कराते रहते हैं।

तय हो जवाबदेही

पंजाब में नारकोटिक ड्रग्स एंड साइकोट्रापिक सब्सटेंस अर्थात एनडीपीएस एक्ट के तहत चल रहे मामलों को लेकर पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय की टिप्पणी किसी गंभीर चेतावनी से कम नहीं है। यह बात किसी से छिपी नहीं है कि एनडीपीएस मामलों में सुनवाई के दौरान अभियोजन गवाहों, खासकर पुलिस अधिकारियों की अनुपस्थिति किस प्रकार से केस को प्रभावित करती है। इससे सुनवाई प्रक्रिया में तो विलंब होता ही है, साथ ही समूची न्यायिक प्रक्रिया पर भी प्रश्नचिह्न लग जाता है। न्यायालय ने यह उचित ही रेखांकित किया है कि गवाहों का यह रवैया एक तरह के असहयोग और उदासीनता की श्रेणी में आता है। इससे अपराधियों को भी अप्रत्यक्ष रूप से संरक्षण मिलता है और अक्सर अपराधी छूट जाते हैं। यह गंभीर मामला है इसलिए इसकी अनदेखी नहीं की जानी चाहिए। एक तरफ प्रदेश सरकार नशे के विरुद्ध अभियान चला रही है, वहीं पुलिस अधिकारियों की गवाही न होने के कारण एनडीपीएस के मामलों में अपराधियों को उचित दंड नहीं मिल पा रहा। अदालत की ओर से फरीदकोट के एसएसपी को शपथ पत्र दाखिल करने का आदेश एक ऐसा कदम है जो जवाबदेही तय करने की ओर इंगित करता है। इसकी आवश्यकता भी है कि जिम्मेदार अधिकारियों की जवाबदेही तय की जाए। आशा तो यह की जानी चाहिए कि पुलिस अधिकारी स्वयं अपनी जिम्मेदारी को समझेंगे और गवाही के लिए समय पर उपस्थित होंगे, ताकि मामलों का समय पर निपटारा हो सके।

> एक तरफ पंजाब सरकार नशे के विरुद्ध युद्ध लड़ रही है, वहीं पुलिस अधिकारियों की गवाही न होने से आरोपितों को उचित दंड नहीं मिल पा रहा

राष्ट्रीय सुरक्षा के भरोसे को झटका

अशोक कुमार

क्या वह व्यवस्था, जिसने मुंबई के सबसे घातक ट्रेन हमले के लिए किसी को भी दोषी नहीं पाया, न्याय सुनिश्चित करने का दावा कर सकती है?

7/11 मुंबई ट्रेन विस्फोटों के लगभग दो दशक बाद बांबे हाई कोर्ट द्वारा सभी 12 दोषियों को बरी करने के फैसले ने देश को झकझोर दिया। इसमें 180 से ज्यादा लोग मारे गए थे और 800 से अधिक घायल हुए थे। न्यायिक स्वतंत्रता और कानून का शासन हमारे लोकतंत्र के आधार स्तंभ हैं, पर इतने बड़े मामले में आपराधिक न्याय प्रणाली का ध्वस्त होना न केवल कानूनी, बल्कि राष्ट्रीय सुरक्षा से जुड़े गंभीर सवाल खड़े करता है। सितंबर 2015 में आतंकवाद निरोधी दस्ते (एटीएस) के नेतृत्व में नौ साल की लंबी जांच के बाद महाराष्ट्र संगठित अपराध नियंत्रण अधिनियम (मकोका) की एक विशेष अदालत ने इन बम विस्फोटों में 13 में से 12 अभियुक्तों को दोषी ठहराया था। पांच को मौत की सजा, सात को आजीवन कारावास और एक को बरी कर दिया गया था। मौत की सजा पाए एक दोषी कोविड के कारण जेल में मर गया था। बांबे हाई कोर्ट ने कहा कि अभियोजन पक्ष आरोपों को साबित करने में 'पूरी तरह विफल' रहा और सभी 12 लोगों को बरी कर दिया। हाई कोर्ट की टिप्पणियां प्रक्रियात्मक कठोरता पर आधारित हैं। विशेष अदालत ने जिन साक्ष्यों के आधार पर दोषसिद्धि के लिए पर्याप्त आधार पाया था, उन्हें ही खारिज करना न केवल पीड़ितों और जांच के लिए अनुचित है, बल्कि खतरनाक भी। बरी किए गए छोटे-मोटे अपराधी नहीं, बल्कि ज्ञात आतंकी संगठनों से जुड़े लोग थे। यह मानना कि वे शांतिपूर्वक समाज में शामिल हो जाएंगे, भोलापन है। आशंका है कि रिहाई उन्हें आतंकी नेटवर्क के साथ फिर से जुड़ने तथा और आतंकी हमलों की साजिश बुनने में सक्षम बना सकती है। हाई कोर्ट का फैसला आपराधिक न्याय प्रणाली में जनता के विश्वास को कम करता है। जब बड़े आतंकी मामलों में न्याय से इन्कार होता दिखता है तो लोग उचित प्रक्रिया में विश्वास खोने लगते हैं। इसके चलते मीडिया ट्रायल और न्यायेतर कार्रवाई की मांग होती है। हैदराबाद में दुष्कर्मियों के मुठभेड़ मामले में ऐसा देखा गया। ऐसे फैसले आतंकवाद के प्रति सख्त राष्ट्र के रूप में भारत की वैश्विक छवि को भी कमजोर करते हैं।

बालाकोट हमले, आपरेशन सिंदूर जैसी कार्रवाइयों और 'किसी भी आतंकी कृत्य को युद्ध माना जाएगा' जैसी घोषणाओं ने ताकत का प्रदर्शन किया, पर 7/11 के मामलों में आतंकियों के बरी होने से यह धारणा बनती है कि भारत आतंकवाद के मामले में एक 'नरम राज्य' है। एटीएस और एनआइए जैसी एजेंसियों के लिए यह नतीजा बेहद निराशाजनक है। वर्षों की उच्च जोखिम वाली जांच और मेहनत की अनदेखी की जा रही है। यह उचित प्रक्रिया या निष्पक्ष सुनवाई को छोड़ने का तर्क नहीं है, बल्कि राष्ट्रीय आघात और सुरक्षा खतरों से जुड़े मामलों में न्यायिक संवेदनशीलता का आह्वान है। विशुद्ध रूप से प्रक्रियात्मक दृष्टिकोण से जनता के विश्वास, मनोबल और सुरक्षा को कमजोर करने का जोखिम भी है।

बड़े पैमाने पर नुकसान पहुंचाने वाले आतंकवाद को बिना सजा के नहीं छोड़ा जा सकता है। न ही संदिग्धों को आतंकी नेटवर्क में फिर से शामिल होने के लिए रिहा किया जा सकता है। आतंकियों का बरी होना जांच, अभियोजन और न्याय प्रणाली में सुधार के लिए एक चेतावनी है। भारत की औपनिवेशिक युग की आपराधिक न्याय प्रणाली आतंकवाद का सामना करने में सक्षम नहीं। आतंकी उन्नत उपकरणों का इस्तेमाल करते हैं और बहुत कम सुबूत छोड़ते हैं, फिर भी यह व्यवस्था प्रत्यक्षदर्शियों जैसे पारंपरिक प्रमाणों की मांग करती है। नागरिक स्वतंत्रता की रक्षा करना महत्वपूर्ण है, लेकिन पुराने मानदंडों का आंख मूंदकर पालन करने से उच्च जोखिम वाले राष्ट्रीय सुरक्षा मामलों में न्याय से समझौता नहीं होना चाहिए। यह मामला न्यायपालिका को गंभीर आत्मचिंतन के लिए बाध्य करता है। दो अदालतें इतने अलग-अलग नतीजों पर कैसे पहुंच सकती हैं? एक मौत की सजा सुनाती है, दूसरी पूरी तरह से बरी कर देती है? उड़ीसा उच्च न्यायालय के पूर्व मुख्य न्यायाधीश और अब वरिष्ठ अधिवक्ता एस. मुरलीधर का दो आरोपियों का प्रतिनिधित्व करने में शामिल होना जटिलता को बढ़ाता है। जहां निष्पक्ष कानूनी प्रतिनिधित्व एक मौलिक अधिकार है, वहीं एक पूर्व शीर्ष न्यायाधीश की भागीदारी नैतिक और संस्थागत चिंताओं को जन्म देती है।

भारत की आंतरिक सुरक्षा और आतंकवाद के मामलों में न्याय सुनिश्चित करने के लिए सुधार और संस्थागत आत्मनिरीक्षण जरूरी हैं। आपराधिक न्याय प्रणाली में पुलिस, अभियोजन और न्यायपालिका शामिल हैं। पुलिस इलेक्ट्रानिक निगरानी, साइबर फोरेंसिक और बहुभाषी खुफिया जानकारी जैसी बदलती तकनीक के साथ तालमेल बिठाने की कोशिश कर रही है। न्यायपालिका को भी तकनीकी प्रगति के साथ तालमेल बिठाना होगा। यूएपीए, मकोका और बीएनएसएस जैसे कानून एन्क्रिप्टेड डाटा, विदेशी संचालकों और छद्म युद्ध से निपटने के लिए विकसित हो रहे हैं, फिर भी न्यायिक देरी, असंगत फैसले और बाहरी प्रभाव परिणामों में बाधा बन रहे हैं।

सुधारों में न केवल जांचकर्ताओं के लिए, बल्कि न्यायाधीशों और अभियोजकों को भी राष्ट्रीय सुरक्षा कानून में विशेष प्रशिक्षण की जरूरत है। गवाहों की सुरक्षा और फोरेंसिक प्रोटोकाल को मजबूत करना भी उतना ही महत्वपूर्ण है। गवाह अक्सर बड़े अपराधियों की धमकियों के आगे झुक जाते हैं। न्याय अपने परिणामों से अनभिज्ञ होकर, अलग-थलग होकर काम नहीं कर सकता है। 7/11 के दोषियों का बरी होना भारत की संस्थागत परिपक्वता की परीक्षा है। सुप्रीम कोर्ट ने बांबे हाई कोर्ट के फैसले पर रोक लगा दी है। अब सुरक्षा के प्रति सचेत दृष्टिकोण के साथ मामले की फिर से जांच करनी होगी। क्या वह व्यवस्था, जिसने मुंबई के सबसे घातक ट्रेन हमले के लिए किसी को भी दोषी नहीं पाया, न्याय सुनिश्चित करने का दावा कर सकती है? सुप्रीम कोर्ट को न केवल कानूनी दृष्टि से, बल्कि राष्ट्रीय जवाबदेही की भावना से भी इस मामले पर विचार करना होगा।

(लेखक उत्तराखंड के पूर्व डीजीपी हैं)

response@jagran.com

आवश्यक है भारत केंद्रित इतिहास लेखन

प्रणव कुमार

पाठ्यपुस्तकों को संतुलित बनाना भारतीयों को गुलामी की मानसिकता से मुक्ति दिलाने के लिए जरूरी है

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद (एनसीईआरटी) ने हाल में कक्षा-8 की सामाजिक विज्ञान की पाठ्यपुस्तक 'एक्सप्लोरिंग सोसायटी, इंडिया एंड बियांड' में कतिपय परिवर्तन किए हैं। इस पहल का मूल उद्देश्य इतिहास, भूगोल, आर्थिक जीवन और शासन-प्रणाली जैसे विषयों को एकीकृत करते हुए विद्यार्थियों के अंदर भारत के सामाजिक विकास की समग्र समझ विकसित करना है। वर्षों से जिस संतुलित इतिहास लेखन की मांग की जा रही थी, यह पुस्तक उसी दिशा में एक ठोस प्रयास प्रतीत होती है। इस पुस्तक में 13वीं से 17वीं शताब्दी के मध्यकालीन इतिहास को विस्तार से प्रस्तुत किया गया है, जिसमें दिल्ली सल्तनत के उत्थान और पतन, समकालीन प्रतिरोध, उस युग की राजनीतिक अस्थिरता, सैन्य अभियान, विजयनगर साम्राज्य, मुगलों एवं उनके प्रतिरोध, मराठों और सिखों के उदय आदि का विश्लेषण ऐतिहासिक साक्ष्यों के आलोक में किया गया है।

पाठ्यपुस्तकों को युगानुकूल और भारत-केंद्रित बनाना समय की मांग है। भारतीयों को गुलामी की मानसिकता से मुक्ति दिलाने के लिए यह आवश्यक है। दिल्ली सल्तनत एवं मुगलों के इतिहास को प्रशंसात्मक दृष्टि से ही पाठ्यपुस्तकों में क्यों पढ़ाया जाना चाहिए? बाबर ने खानवा का युद्ध, चंदेरी का युद्ध, घाघरा का युद्ध एवं अन्य अनेक आक्रमणों के दौरान कत्लेआम और लूटमार को अंजाम दिया था। युद्धों के पश्चात मारे गए हिंदुओं की खोपड़ियों की मीनारें खड़ी करने की बातें उसकी आत्मकथा 'बाबरनामा' में विस्तार से दर्ज हैं। अकबर की कथित महानता का भी हमारी पाठ्यपुस्तकों में इस प्रकार यशोगायन किया गया है कि उसके नाम के बाद 'महान' विशेषण न जुड़े तो कुछ छूट जाने का आभास होता है। जबकि सच्चाई यह है कि चित्तौड़ के किले की घेराबंदी के दौरान उसने 1568 में करीब 30,000 हिंदुओं का नरसंहार किया था, जिसमें स्त्रियां, बच्चे और किसान तक शामिल थे। स्वयं अकबर द्वारा नौ मार्च, 1568 को प्रकाशित फतेहनामा-ए-चित्तौड़ इन तथ्यों की गवाही देता है। इस फतेहनामे को 1598 में संकलित मुंशात-ए-नमकीन में भी सम्मिलित किया गया है। इसके संकलनकर्ता अकबर के दरबारी मीर अब्दुल कासिम नमकीन थे। अकबर के समकालीन आरिफ मोहम्मद कंधारी ने अपनी पुस्तक तारीख-ए-अकबरी में भी इसका उल्लेख किया है।

अकबर के अन्य दरबारियों में प्रमुख अबुल फजल की पुस्तक 'आइने अकबरी' एवं 'अकबरनामा' तथा इमाम अब्दुल कादिर बदायूंनी की पुस्तक 'मुंतखब-उत-तवारीख' भी उसकी क्रूरता, मजहबी कट्टरता एवं कामुकता के अतिरंजित विवरणों से भरे हैं। उसे एक आदर्श नायक की तरह सिनेमा तथा इतिहास में प्रस्तुत किया गया, जबकि अबुल फजल के अनुसार 'अकबर के हरम में लगभग पांच हजार औरतें थीं और ये पांच हजार औरतें उसकी 36 पत्नियों से अलग थीं।' वह सुंदर स्त्रियों का बलात अपहरण करने एवं उन्हें अपनी वासना का शिकार बनाने के लिए मीना बाजार लगवाता था। उसकी क्रूरता की यातनाप्रद प्रक्रिया से बचने तथा अपनी अस्मिता एवं स्वाभिमान की रक्षा के लिए हिंदू स्त्रियां जलती चिता में जलकर जौहर कर लेने को जीवन से अधिक सम्माननीय मानती थीं। चरित्र की दृष्टि से इतने दुर्बल एवं बर्बर शासक को स्वतंत्रता के इतने वर्षों बाद तक किस मानसिकता से पाठ्यपुस्तकों में महान पढ़ाया जाता रहा और मातृभूमि, स्वराज, स्वधर्म एवं स्वत्व की रक्षा के लिए लड़ने वाले महाराणा प्रताप और छत्रपति शिवाजी जैसे योद्धाओं को जानबूझकर छोटा साबित किया गया? क्या एक भी ऐसा उदाहरण है, जब छत्रपति शिवाजी, महाराणा प्रताप या अन्य किसी सनातनी शासक ने धर्म या पूजा-पद्धति के आधार पर गैर सनातनी मतावलंबियों से भेदभाव किया हो या उनका नरसंहार किया हो या उनके उपासना-स्थल तोड़े हों? फिर मजहब के आधार पर गैर मुसलमानों का कत्लेआम करने वाले मुगल कैसे महान हो गए?

यह सर्वमान्य तथ्य है कि औरंगजेब तलवार के बल पर हिंदुस्तान को दारुल हरब से दारुल इस्लाम में परिणत करना चाहता था। उसकी नजर में हर हिंदू केवल और केवल काफिर था, जिनका खून बहाना, जिनके मंदिर नष्ट करना, जिनकी आस्था को निर्दयतापूर्वक कुचलना वह अपना 'पाक और मजहबी फर्ज' समझता था। 12 अप्रैल, 1669 को उसने हिंदुओं पर जजिया कर लगाने का आदेश दिया। औरंगजेब ने हिंदू त्योहारों पर पाबंदी लगा दी थी और जब तक वह जिंदा रहा, तब तक हिंदू न खुलकर दीपावली मना पाए, न होली ही खेल सके। उसने अपने पूरे राज्य में हिंदुओं के मंदिरों, शिक्षा-केंद्रों और पवित्र स्थलों को तोड़ने के आदेश दिए थे। उसके आदेश पर काशी के विश्वनाथ मंदिर, मथुरा के श्रीकृष्ण जन्मभूमि मंदिर और पाटन के सोमनाथ मंदिर समेत हजारों मंदिर गिरा दिए गए थे। 1688 में उसने हिंदुओं के लिए पालकी, हाथी और घोड़े की सवारी पर पाबंदी लगा दी और अस्त्र-शस्त्र रखने को अपराध घोषित कर दिया। हिंदुओं पर किए गए औरंगजेब के बर्बर एवं पाशविक अत्याचार का विस्तृत विवरण उसके ही एक दरबारी मुहम्मद साकी मुस्तइद खान की पुस्तक 'मआसिर-ए-आलमगीरी' में पढ़ने को मिलता है। समय आ गया है कि नरसंहार करने वालों का महिमामंडन बंद कर स्व, स्वत्व और भारत केंद्रित इतिहास का पुनर्लेखन किया जाना चाहिए।

(लेखक शिक्षाविद् हैं)

response@jagran.com

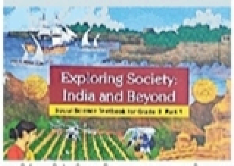

एनसीईआरटी ने की जरूरी पहल। प्रतीकात्मक

ऊर्जा

प्रकृति से संवाद

मां को धरती से महान कहा गया है, किंतु प्रकृति तो सबकी मां है। उसके आंचल का विस्तार उतना है जितना आकाश का। उसकी अमृतमयी छाया में जलचर, थलचर और नभचर सभी जीव आश्रय पाते हैं। उसके प्राणतत्वों से पालित-पोषित होकर जीवन के वास्तविक उद्देश्य की ओर अग्रसर होते हैं। दुर्लभ मानव तन की सार्थकता हेतु मनुष्य के लिए यह परम आनंद की यात्रा होती है, जो नैसर्गिक पर्यावरण के बिना संभव नहीं है। जब जन्म देने वाली मां के ऋण को चुकाया नहीं जा सकता, तो जड़-चेतन सब जीवों का योगक्षेम वहन करने वाली इस मां से कैसे ऋणमुक्त हुआ जा सकता है?

प्रकृति सबसे बड़ी शिक्षिका है। अणु से पहाड़ तक, बूंद से सागर तक प्रकृति का हर तत्व शिक्षक की भूमिका में नजर आता है। उसका साहचर्य धरती सा क्षमावान, सागर सा धैर्यवान, सूर्य सा ऊर्जावान और आकाश सा महान बनने की प्रेरणा देता है। अहर्निश बाधाओं से संघर्ष करती हुई नदियां लक्ष्य प्राप्ति तक विश्राम न करने का संदेश देती हैं। निरंतर परोपकार में निरत समूची प्रकृति मनुष्य को मानवता का पाठ पढ़ाती है। उसकी इस मांगलिक सिद्धि में पावस ऋतु सहायिका बनकर प्रतिवर्ष चातुर्मासिक जलाभिषेक से उसे प्राणवंत बनाती है। मौन होकर भी मुखर रहने वाली सचेतन प्रकृति हमारे समान सुख-दुख का अनुभव करती है। उसे समझने के लिए बुद्धि कौशल और भाषा की नहीं, संवेदना की जरूरत है। संवाद तब अधिक प्रभावी होता है, जब भाषा निःशब्द हो और वाणी मौन। भावनात्मक तादात्म्य होने पर बाह्य इंद्रियों के बिना ही भाव प्रकाशन होने लगता है। भगवान दत्तात्रेय ने प्रकृति के साथ यही संबंध स्थापित किया, जिससे प्रकृति के तुच्छ कीट-पतंगादि भी उनके गुरु बन गए। अब जो उसका विनाशक रूप दृष्टिगोचर होता है, वह मनुष्य की संवेदनहीनता और प्रकृति के साथ संवाद में कमी का परिणाम है।

डा. सत्यप्रकाश मिश्र

बिग बैंग की समझ का विस्तार संभव

प्रदीप

ब्रह्मांड की संरचना के संदर्भ में कायम रहस्यों को उजागर करने में जुटे हैं विज्ञानी

ब्रह्मांड विज्ञान के सबसे बड़े अनसुलझे रहस्यों में एक यह है कि जब 13.8 अरब वर्ष पहले बिग बैंग से हमारे ब्रह्मांड की उत्पत्ति हुई थी, तब पदार्थ (मैटर) और प्रतिपदार्थ (एंटीमैटर) समान मात्रा में बने थे, लेकिन वर्तमान में हमें अपने चारों ओर पदार्थ से भरा ब्रह्मांड ही दिखाई देता है, एंटीमैटर लगभग कहीं नहीं मिलता। इस विसंगति का क्या कारण है? हाल ही में यूरोपीय परमाणु अनुसंधान परिषद (सर्न) के नेतृत्व में हुआ एक महत्वपूर्ण प्रयोग यह समझने में मदद कर सकता है कि ब्रह्मांड मुख्यतः पदार्थ से क्यों बना है, प्रतिपदार्थ से क्यों नहीं?

वस्तुतः प्रतिपदार्थ की विशेषताएं पदार्थ के जैसे ही होती हैं, लेकिन इनका निर्माण करने वाले कणों का आवेश पदार्थ का निर्माण करने वाले कणों से उल्टा होता है। इसके नाभिक में ऋणात्मक एंटीप्रोटान और उदासीन एंटीन्यूट्रान होता है और कक्षा ऋणात्मक धनात्मक पाजीट्रान से निर्मित होती है। जब साधारण पदार्थ का कण प्रतिपदार्थ के कण से टकराता है, तो दोनों कण नष्ट होकर ऊर्जा में परिवर्तित हो जाते हैं। यदि बिग बैंग के समय पदार्थ और प्रतिपदार्थ की मात्राएं समान थीं, तो ब्रह्मांड को पूरी तरह ऊर्जा में बदल जाना चाहिए था। यानी बिग बैंग के कुछ ही क्षणों बाद ब्रह्मांड को स्वयं को नष्ट कर लेना चाहिए था।

साइंस जर्नल 'नेचर' में प्रकाशित अध्ययन के अनुसार, सर्न में एलएचसीबी (लार्ज हैड्रान कोलाइडर ब्यूटी) नामक प्रयोग को अंजाम देने वाले शोधकर्ताओं ने पदार्थ के कणों, जिन्हें बारियोन कहा जाता है, उसके क्षय की दर और प्रतिपदार्थ (एंटीबारियोन) के उनके विपरीत कणों के क्षय की दर में अंतर को रिकार्ड किया है। क्षय की प्रक्रिया में कोई अस्थिर कण दो या अधिक हल्के और स्थिर कणों में बदल जाता है। यह बेहद संवेदनशील और जटिल मापन है, लेकिन इसकी वैज्ञानिक महत्ता अत्यंत गहरी है। पूर्व में पदार्थ और प्रतिपदार्थ के बीच यह अंतर मेसान नामक कणों के साथ में देखा गया था, जो क्वार्क और एंटीक्वार्क से निर्मित होते हैं। मगर अब पहली बार बारियोन कणों में भी यह अंतर रिकार्ड किया गया है। यह खोज इसलिए अहम है, क्योंकि यही कण हमारे ज्ञात ब्रह्मांड की मूलभूत ईंटें हैं। इस अंतर का स्पष्ट होना एक संभावित संकेत है कि ब्रह्मांड की संरचना में कोई अब तक अज्ञात मौलिक सिद्धांत या कण सक्रिय रहा होगा।

शोधकर्ताओं का प्रयास है कि वे इन प्रायोगिक विसंगतियों के पीछे छिपे कारणों को और समझें। निकट भविष्य में एलएचसीबी के और भी विस्तृत डाटा संग्रह एवं विश्लेषण से यह संभव है कि हम उन मौलिक नियमों तक पहुंच पाएं, जो यह समझा सकें कि बिग बैंग के बाद पदार्थ कैसे बचा रह गया और उसने किस तरह वर्तमान ब्रह्मांड को आकार दिया। यह अध्ययन न केवल बिग बैंग की हमारी समझ को और गहराई प्रदान करता है, बल्कि यह भौतिकी के ''मानक माडल'' से आगे बढ़ने की संभावना को भी दर्शाता है।

(लेखक विज्ञान संचारक हैं)

मतदाता सूची की शुद्धता अनिवार्य

'चुनाव आयोग के सही सवाल' शीर्षक से प्रकाशित संपादकीय में स्पष्ट किया गया है कि क्यों मतदाता सूची के शुद्धीकरण की चुनाव आयोग की पहल सराहनीय है और विपक्षी दलों द्वारा किया जा रहा विरोध किस प्रकार से स्वार्थपूर्ण और लोकतंत्र विरोधी है। लोकतंत्र का आत्मा उसकी निष्पक्षता और पारदर्शिता में निहित है। चुनाव आयोग द्वारा मतदाता सूची के सत्यापन की पहल न केवल प्रशंसनीय है, बल्कि यह लोकतंत्र को मजबूत करने की दिशा में एक अनिवार्य कदम भी है, परंतु यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि कुछ राजनीतिक दल इस प्रक्रिया को राजनीतिक साजिश का रूप देकर जनमत को गुमराह करने में जुटे हैं। क्या मृतकों, विदेश में बस चुके लोगों या अवैध रूप से जुड़ चुके नामों को सूची में बनाए रखना किसी भी लोकतांत्रिक मूल्य के अनुकूल है? यह तो वैध मतदाताओं के अधिकारों का सीधा उल्लंघन है। मतदाता सूची की पवित्रता सुनिश्चित करना चुनाव आयोग का संवैधानिक दायित्व है जिसे पूरा करना उसके अधिकार क्षेत्र में ही नहीं, कर्तव्य क्षेत्र में भी आता है। लोकतंत्र को बचाने का दावा वे लोग कर रहे हैं, जो स्वार्थवश लोकतांत्रिक संस्थाओं को ही कठघरे में खड़ा कर रहे हैं। यह प्रवृत्ति खतरनाक है। यदि राजनीतिक दलों को किसी प्रक्रिया पर आपत्ति है तो उन्हें कानूनी एवं संवैधानिक मार्ग अपनाना चाहिए, न कि हंगामे और भ्रम की राजनीति। समाधान स्पष्ट है मतदाता सूची को जीवित, प्रामाणिक और अद्यतन बनाए रखना हर राजनीतिक दल और नागरिक का साझा उत्तरदायित्व होना चाहिए। तभी हमारा लोकतंत्र सशक्त, समावेशी और निष्पक्ष बनेगा।

bhubaaman2020@gmail.com

प्रतिक्रिया

शासन-प्रशासन की अनदेखी

राजस्थान के झालावाड़ में विद्यालय की छत गिरने से कुछ बच्चों की मौत हो गई। यह दर्दनाक हादसा वास्तव में शासन-प्रशासन की अनदेखी, लापरवाही और गैर जिम्मेदाराना रवैये का ही एक और उदाहरण है। देश में आधारभूत संरचनाओं के निर्माण, मरम्मत रखरखाव और निगरानी की महती आवश्यकता है। ये हादसे भूल नहीं, बल्कि एक अपराध हैं। आखिर कब तक निर्दोष नागरिक यूं इन दुर्घटनाओं के शिकार होते रहेंगे? आखिर शासन-प्रशासन दुर्घटनाओं-हादसों के घटने के बाद ही हरकत में क्यों आता है? यदि वे पहले ही सतर्क-जागरूक रहते, मानवीय दृष्टिकोण अपनाते हुए ग्रामीणों की शिकायतों पर ध्यान देते और तत्काल सूझबूझ भरा निर्णय ले लेते तो आज जर्जर इमारत गिरने से बच्चे असमय काल कवलित नहीं होते। अब शासन-प्रशासन के जिम्मेदार संवेदना-सहानुभूति, जांच, क्षतिपूर्ति या मुआवजा देकर मामले में अपने कर्तव्य की इतिश्री कर रहे हैं, लेकिन क्या इतना पर्याप्त है। हो सकता है कि जांच में दोषी पाए गए संबंधित अधिकारियों को कुछ समय का निलंबन झेलना पड़े। सरकारी महकमा और तंत्र के आला अधिकारी, मंत्री और न्यायालय अब कुछ भी कर लें, लेकिन सबसे महत्वपूर्ण बात जिन बच्चों की जान चली गई, जिन परिजनों ने अपनों को खो दिया वे वापस नहीं आ सकते। हम एक तरफ चांद पर जाने की बात करते हैं, विकसित भारत की बात करते हैं, परंतु दूसरी तरफ सरकारी निर्माण के ढहने से हुई मौतों को रोकने के लिए कोई प्रयास ही नहीं कर रहे। लगातार इस तरह के हादसे बार-बार यह इंगित कर रहे हैं कि व्यवस्था और तंत्र में व्यापक सुधार की अनिवार्य आवश्यकता है, परंतु शासन-प्रशासन इनसे कुछ सबक सीखने को तैयार ही नहीं है। वह बस हादसों का इंतजार करता है और फिर उसी पुराने ढर्रे से व्यवस्था चलने लग जाती है। इससे बड़ी विडंबना क्या होगी कि इसी वर्ष महाराष्ट्र और गुजरात में पुल की दुर्घटनाओं के बावजूद शासन-प्रशासन नहीं चेत रहा। अवसंरचना-अधोसंरचना, आधारभूत ढांचे के निर्माण की गुणवत्ता सामग्री की जांच हो तथा शिकायतों के बावजूद कुछ नहीं करने वाले उदासीन, निष्क्रिय और अमानवीय तंत्र के सभी घटकों के प्रति सख्त कानूनी कार्रवाई हो।

sonimohit895@gmail.com

इस स्तंभ में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्रीय संस्करण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए पाठकगण सादर आमंत्रित हैं। आप हमें पत्र भेजने के साथ ई-मेल भी कर सकते हैं।
अपने पत्र इस पते पर भेजें :
दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण,
डी-210-211, सेक्टर-63, नोएडा
ई-मेल : response@jagran.com

संस्थापक- स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त, पूर्व प्रधान संपादक- स्व. नरेन्द्र मोहन, चेयरमैन एवं मैनेजिंग डायरेक्टर- महेन्द्र मोहन गुप्त, प्रधान संपादक- संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए, नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग, रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्करण) -विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*
दूरभाष : नई दिल्ली कार्यालय : 011-43166300, नोएडा कार्यालय : 0120-4615800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No. DELHIN/2017/74721 * इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई/रेल शुल्क ₹-2 अतिरिक्त।

1.86 करोड़ घरेलू बिजली उपभोक्ता हैं बिहार में, जिनमें से लगभग 1.67 करोड़ उपभोक्ता हर माह 125 यूनिट से कम बिजली की खपत करते हैं।

मुफ्त बिजली योजना

राज्यों पर आर्थिक बोझ बढ़ने की आशंका

रोहित प्रियदर्शी
लोकनीति विश्लेषक

बिहार सरकार प्रदेश में बिजली उपभोक्ताओं को हर महीने 125 यूनिट बिजली मुफ्त देने की योजना शुरू करने जा रही है। इस संबंध में विचारणीय है कि मुफ्त बिजली की यह राजनीति अब केवल एक राज्य तक सीमित नहीं रही। दिल्ली, पंजाब, झारखंड, छत्तीसगढ़ और तमिलनाडु जैसे कई राज्यों में यह रुझान आम होता जा रहा है। सवाल यह है कि देश में मुफ्त योजनाएं, खासकर बिजली जैसी आधारभूत सेवाएं, सामाजिक न्याय की दिशा में एक बढ़ता हुआ कदम है या फिर केवल सत्ता तक पहुंचने की सीढ़ी? दीर्घकाल में होने वाले इसके नुकसान को भी देखना-समझना होगा

लोकलुभावन राजनीति का ही नतीजा है कि तमाम राज्य मुफ्त बिजली योजना को अपनाते जा रहे हैं। फाइल

बिहार में विधानसभा चुनाव में अब महज तीन माह का समय शेष है। हर माह 125 यूनिट बिजली मुफ्त देने की सरकार की घोषणा के साथ ही एक बार फिर मुफ्त बिजली की गूंज देश के सियासी गलियारों में तेज हो गई है। देश की राजनीति में मुफ्त बिजली कोई नई बात नहीं है। पंजाब, दिल्ली, झारखंड, छत्तीसगढ़ और तमिलनाडु जैसे राज्यों ने समय-समय पर इस रणनीति को अपनाया है। दिल्ली और पंजाब में आम आदमी पार्टी ने इसी माडल को आधार बनाकर चुनावों में बढ़त पाई। अब बिहार में भी इसी दिशा में कदम बढ़ाए जा रहे हैं। परंतु सवाल वही पुराना है: इस मुफ्त बिजली की कीमत कौन चुका रहा है? सरकार? नहीं। आखिरकार यह बोझ तो करदाताओं के कंधों पर ही पड़ता है चाहे वे लाभ लें या न लें।

यह समझना जरूरी है कि मुफ्त बिजली का अर्थ केवल फ्री यूनिट देना नहीं है, बल्कि यह निर्णय वित्तीय अनुशासन, दीर्घकालिक रणनीति और सामाजिक न्याय तीनों से जुड़ा है। यदि यह योजना लक्षित, पारदर्शी और जिम्मेदार तरीके से लागू की जाती है, तो यह सामाजिक न्याय की दिशा में एक सकारात्मक पहल हो सकती है। लेकिन यदि यह सभी वर्गों को बिना किसी आर्थिक आधार के समान रूप से दे दी जाती है, तो यह केवल वोटबैंक मजबूत करने का तरीका बन जाता है। यह सही है कि समाज के वंचित वर्गों का उत्थान करना सरकार का नैतिक दायित्व है। कल्याणकारी उपाय प्रदान करना इस कर्तव्य को पूरा करने के रूप में देखा जा सकता है, विशेषकर गरीबी और असमानता को दूर करने में। हालांकि, वास्तविक कल्याण और वोट हासिल करने के उद्देश्य से की जाने वाली लोक-लुभावनवादिता के बीच एक महीन रेखा है। बिहार पहले से ही राजस्व घाटे से जूझ रहा है। ऐसे में यदि सरकार हर महीने करोड़ों यूनिट बिजली मुफ्त देती है, तो इसका सीधा असर शिक्षा, स्वास्थ्य, बुनियादी ढांचे और कृषि जैसी जरूरी सेवाओं के बजट पर पड़ेगा।

वहीं मुफ्त बिजली उपभोग की आदतों को भी दुष्प्रभावित करती है। जब किसी संसाधन की कोई कीमत नहीं होती, तो उसका दुरुपयोग स्वाभाविक है। इससे न केवल बिजली की खपत अनावश्यक रूप से बढ़ती है, बल्कि वितरण तंत्र पर भी अतिरिक्त दबाव पड़ता है। कई मामलों में देखा गया है कि मुफ्त बिजली का लाभ मध्यम और उच्च आयवर्ग के लोग भी उठा लेते हैं, जिससे असली जरूरतमंद वंचित रह जाते हैं।

यह सही है कि प्रत्यक्ष लाभ अंतरण से मांग को बढ़ावा मिलता है तथा क्रय शक्ति में वृद्धि होती है और व्यय में वृद्धि के माध्यम से स्थानीय अर्थव्यवस्थाओं को प्रोत्साहन मिलता है। इसके अलावा सार्वजनिक वितरण प्रणाली (पीडीएस) और मध्याह्न भोजन जैसी खाद्य सुरक्षा योजनाएं बुनियादी जीविका सुनिश्चित करने के साथ गरीबी को कम करने में भूमिका निभाती हैं। साइकिल और लैपटाप जैसी वस्तुओं का वितरण करके, सरकारें विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में शैक्षिक पहुंच में सुधार करती हैं। उदाहरण के लिए, छात्रों के बीच लैपटाप वितरित करने जैसी मुफ्त सुविधाएं, उनकी उत्पादकता, ज्ञान और कौशल को बढ़ा सकती हैं। नीति आयोग की एक रिपोर्ट में कहा गया है कि बिहार और बंगाल में छात्राओं को साइकिल वितरित करने से स्कूल छोड़ने की दर में उल्लेखनीय कमी आई है, उपस्थिति बढ़ी है और सीखने के परिणामों में सुधार हुआ है।

आगे की राह : मुफ्त बिजली की जगह यदि सरकारें सस्ती, भरोसेमंद और सतत ऊर्जा नीति पर जोर दें, तो अधिक प्रभावी और न्यायसंगत व्यवस्था बन सकती है। इसके लिए, कुछ व्यावहारिक कदम हो सकते हैं- पहला, आय या सामाजिक-आर्थिक वर्ग आधारित सब्सिडी : जिन परिवारों की आय निश्चित सीमा से कम है, उन्हीं को लक्षित रूप से बिजली छूट दी जाए। दूसरा, सरकारें ऊर्जा दक्ष उपकरणों को सब्सिडी पर उपलब्ध कराएं, ताकि बिजली की खपत स्वाभाविक रूप से घटे। तीसरा, सोलर पावर को बढ़ावा : ग्रामीण क्षेत्रों में सोलर रूफटाप योजनाओं और मिनी ग्रिड सिस्टम का विस्तार किया जाए। चौथा- ग्रेडेड टैरिफ माडल : जो जितनी बिजली खर्च करे, उसी के अनुसार उसे भुगतान करना पड़े- लेकिन जरूरतमंदों के लिए एक निर्धारित सीमा तक सब्सिडी बनी रहे।

बिहार जैसे राज्यों की वित्तीय स्थिति पहले से ही अस्थिर है। सरकारी रिपोर्टों के अनुसार, राज्य की कर-संग्रहण क्षमता और जीएसडीपी अनुपात अन्य राज्यों की तुलना में कम है। ऐसे में यदि राज्य सरकार इस तरह की योजनाओं का पूरा बोझ उठाएगी, तो वह अपने अन्य प्राथमिकताओं से समझौता करने के लिए विवश होगी। इस संदर्भ में नीति आयोग और वित्त मंत्रालय को मिलकर एक ऐसे ढांचे की परिकल्पना करनी चाहिए जो मुफ्त योजनाओं की सीमा और वित्तीय स्रोत स्पष्ट रूप से तय करे। सीएसआर, कार्बन टैक्स या ऊर्जा क्षतिपूर्ति फंड आदि की भी भूमिका बढ़ाई जानी चाहिए।

यह सच है कि लोकतंत्र में राजनीतिक दलों को जनहित की योजनाएं बनाने का अधिकार है, लेकिन यह अधिकार जवाबदेही के साथ आता है। अल्पकालिक चुनावी लाभ को दीर्घकालिक स्थिरता पर प्राथमिकता देना देश की नीति और समाज दोनों के लिए घातक है। बिहार सरकार की घोषणा निश्चित रूप से बड़ी संख्या में लोगों को राहत पहुंचाएगी। लेकिन यह भी उतना ही जरूरी है कि योजना को आर्थिक रूप से टिकाऊ, लक्षित और सुनियोजित बनाया जाए। मुफ्त योजनाएं तब तक ही लोककल्याणकारी हैं, जब तक वे जरूरतमंदों को राहत देती हैं और राजकोष पर असहनीय बोझ नहीं डालतीं। यदि यह केवल चुनावी 'टूलकिट' का हिस्सा बनकर रह जाएं, तो वे संसाधनों का दुरुपयोग, आर्थिक असंतुलन और नीति विफलता की मिसाल बन सकती हैं। कुल मिलाकर फ्रीबीज पर अत्यधिक निर्भरता के बजाय, सरकार को सामाजिक सुरक्षा तंत्रों को मजबूत करने पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए, जैसे गुणवत्तापूर्ण स्वास्थ्य देखभाल, सुदृढ़ शिक्षा प्रणाली, रोजगार सृजन और व्यापक गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम, ताकि सामाजिक-आर्थिक असमानता के मूल कारणों का प्रभावी ढंग से समाधान किया जा सके।

सौर ऊर्जा : एक टिकाऊ समाधान की तलाश

ऊर्जा क्षेत्र में आत्मनिर्भरता और पर्यावरण संरक्षण के दोहरे लक्ष्य को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार ने प्रधानमंत्री सूर्य घर मुफ्त बिजली योजना भी शुरू की है। इस योजना का मुख्य उद्देश्य है देशभर में घरों की छतों पर सोलर पैनल लगाकर न केवल मुफ्त बिजली उपलब्ध कराना, बल्कि हर परिवार को ऊर्जा उत्पादक बनाना। सरकार का लक्ष्य है कि इस योजना के अंतर्गत 30 गीगावाट सौर क्षमता विकसित की जाए, जिससे अगले 25 वर्षों में लगभग एक हजार अरब यूनिट बिजली का उत्पादन संभव होगा। इस योजना की सबसे बड़ी खूबी यह है कि ऊर्जा बचत के साथ ही यह आमदनी का साधन भी बन सकती है।

सरकार के अनुसार, एक औसतन तीन किलोवाट का रूफटाप सोलर सिस्टम हर महीने करीब तीन सौ यूनिट बिजली पैदा कर सकता है, जो अधिकांश घरेलू उपभोक्ताओं की जरूरतों को पूरा करने में सक्षम है। इससे बिजली बिल में भारी कटौती होगी। इतना ही नहीं, अतिरिक्त बिजली को वितरण कंपनियों (डिस्काम) को बेचकर परिवार अतिरिक्त आय भी अर्जित कर सकते हैं। यह पहल मध्यमवर्गीय और निम्नवर्गीय परिवारों को सीधा आर्थिक लाभ दे सकती है, जिससे ऊर्जा केवल उपभोग की वस्तु न रहकर आमदनी का साधन बन सकती है। योजना के तहत केंद्र सरकार सब्सिडी और तकनीकी सहायता भी दे रही है, जिससे इसकी पहुंच आम लोगों तक आसान हो सके। यह योजना केवल आर्थिक दृष्टि से नहीं, बल्कि पर्यावरणीय लिहाज से भी बेहद अहम है। सरकार का आकलन है कि यह परियोजना अपने पूरे जीवनकाल में कार्बन डाईआक्साइड जैसी हानिकारक गैसों के उत्सर्जन में 72 करोड़ टन की कमी ला सकती है। यानी अंतरराष्ट्रीय जलवायु प्रतिबद्धताओं की दिशा में भी देश तेजी से आगे बढ़ रहा है।

वैसे कुछ चुनौतियां इसे पूर्ण सफलता तक पहुंचने से रोक सकती हैं। कई राज्यों में मुफ्त बिजली दी जा रही है, जिससे लोग निजी सौर प्रणाली लगाने में रुचि नहीं दिखा रहे हैं। जब उन्हें बिना कोई निवेश किए मुफ्त बिजली मिल रही है, तो वे ऐसा होना स्वाभाविक भी है। वहीं, कई शहरी व ग्रामीण इलाकों में छतें छोटी हैं, या आस-पास की इमारतों की छाया के कारण पर्याप्त धूप नहीं मिल पाती। कई और कारण हैं जो उपभोक्ताओं तक इस योजना की पहुंच को सीमित कर सकते हैं।

वैसे भी सौर ऊर्जा संयंत्रों की स्थापना केवल सरकारी प्रयासों से नहीं, बल्कि उपभोक्ताओं की सक्रिय भागीदारी से ही प्रभावी हो सकती है। इसके लिए, जागरूकता कार्यक्रम, प्रशिक्षण शिविर और आसान अनुदान प्रक्रिया जरूरी है। आज भी देश के अनेक गांवों में सौर ऊर्जा संयंत्रों की स्थापना के लिए जरूरी तकनीकी और ग्रिड सुविधाएं उपलब्ध नहीं हैं। यदि बिजली उत्पादन हो भी गया, तो उसे स्टोर करने और जरूरत के समय उपयोग करने की व्यवस्था मजबूत नहीं है। प्रधानमंत्री सूर्य घर योजना भविष्य की ऊर्जा आवश्यकताओं व पर्यावरणीय जिम्मेदारियों की ओर उठाया गया सशक्त कदम है। यह योजना केवल मुफ्त बिजली नहीं, बल्कि आत्मनिर्भरता, हरित अर्थव्यवस्था और रोजगार के अवसरों का बड़ा माध्यम बन सकती है। लेकिन इसकी सफलता इस बात पर निर्भर करेगी कि सरकार तकनीकी, संस्थागत और सामाजिक चुनौतियों से किस कुशलता से निपटती है। यदि सही ढंग से लागू किया जाए, तो यह योजना भारत के ऊर्जा परिदृश्य में क्रांतिकारी परिवर्तन ला सकती है और हर घर को 'ऊर्जा-आत्मनिर्भर' बना सकती है। **(रोहित प्रियदर्शी)**

फिर से

कहां गई गौरैया...

'अब हमें गौरैया क्यों नहीं दिखती?' मन को छूता हुआ यह सवाल, लेकिन अब तो श्राद्ध के दिनों में पूर्वजों को खिलाने के लिए कौवे, जो कभी रोजमर्रा की जिंदगी हुआ करते थे, आस-पास से गायब ही गए हैं। प्रदूषण से गायब हुए। ऐसा बोलना बड़ा आसान लगता है, लेकिन संभवतः यही कड़वा सच भी है। परंतु क्या पूरा सच है?

हर साल पृथ्वी दिवस या पर्यावरण दिवस एक औपचारिक समारोह के रूप में ठीक-ठाक ही मना रहे हैं- पौधा लगाकर, इंटरनेट मीडिया पर पोस्ट शेयर करके जागरूक कर के, सेमिनार करा कर, खादी की महंगी साड़ियां, कुर्ता आदि पहन कर। लेकिन ज्ञान होने की पराकाष्ठा देखिए, पूछ लीजिए स्वयं से कभी जैसे हर बार अपने बच्चे से चवन्नी का हिसाब पूछते हैं। हम क्या लगा रहे हैं? हम इसे कहां लगा रहे हैं? हम इसे क्यों लगा रहे हैं? और क्या हम इसे सही तरीके से कर रहे हैं?

असली नुकसान तो कहीं और ही कर रहे हैं। ज्ञान के अभाव में प्रकृति के विकास के तरीके को बदल रहे हैं- बिना इसका अहसास किए। अपने बगीचों, बालकनियों, पार्कों और परिसरों को ऐसे सजावटी पौधों से भर रहे हैं जो देखने में भले ही अच्छे लगें, लेकिन हमारी धरती के लिए अजनबी हैं। इस प्रक्रिया में उन पारिस्थितिक तंत्रों को तहस-नहस कर रहे हैं जो कभी पक्षियों, कीड़ों और यहां तक कि हमारे मौसमों की प्राकृतिक लय को भी बनाए रखते थे।

पेड़ों की पीढ़ियों, उनकी उम्र और उनके जीवनचक्र के बारे में न जानकर एक सभ्यता के ज्ञान को खो रहे हैं। देशी पेड़ उगाने का महत्व जो हमारी मिट्टी, हमारे पक्षियों, हमारी जलवायु के लिए है- अब केवल गांवों तक सीमित हो गया है, और वहां भी, यह समय के साथ शहरों की चकाचौंध के आकर्षण में फीका पड़ जाएगा।

कैसे ही सोचें कि क्या हमारी स्थानीय नर्सरियां और माली हमें मार्गदर्शन करने के लिए प्रशिक्षित हैं? क्या उन्हें पता है कि क्या सुझाव देना है- और उससे भी महत्वपूर्ण बात, क्यों? आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के गुण गाइए- चिड़ियों के बिना बालकनी तो सौंदर्यबोध आयात करती ही रहेगी। इन सब चीजों के बारे में क्या हमें फिर से विचार नहीं करना चाहिए?

(डा. गुंजन राजपूत की फेसबुक वाल से संपादित अंश, साभार)

पोस्ट

भारत-ब्रिटेन मुक्त व्यापार समझौता ब्रिटेन की मौजूदा लेबर पार्टी की सरकार को गिरने से बचाने वाला है। आज एक पूर्व उपनिवेश (भारत), उस उपनिवेशवादी (इंग्लैंड) की अर्थव्यवस्था को सहारा दे रहा है जिसने कभी हमारी अर्थिकी को तबाह किया था।
शेखर कपूर@shekharkapur

केंद्र सरकार ने आल्ट बालाजी, उल्लू जैसे साफ्ट पोर्न परोसने वाले 25 एप और ओटीटी प्लेटफार्म को बैन कर दिया है। यह स्वागतयोग्य फैसला है।
प्रभाकर कुमार मिश्र@PMishra_Journo

राजस्थान के झालावाड़ में सरकारी स्कूल की छत गिरने से सात बच्चों की मौत हो गई, कई बच्चे घायल हैं। उम्र छह से 17 साल के बीच है। ये कोई हादसा नहीं, बल्कि संस्थानिक तौर पर की गई हत्या है। इसकी जिम्मेदारी तय होनी ही चाहिए।
अभिनव पांडे@Abhinav_Pan

विवेक रामास्वामी का रवैया एकदम सही है कि जोहरान ममदानी के कुत्सित विचार ही उनके विरोध के लिए पर्याप्त हैं, इसलिए उनके मजहब को निशाना नहीं बनाया जाना चाहिए। सदानंद धूमे@dhume

अरुण अशेष
राज्य ब्यूरो प्रमुख, बिहार

बिहार डायरी

किसका क्या बनाएंगे- बिगाड़ेंगे प्रशांत किशोर

विधानसभा चुनाव के ठीक पहले बिहार का यह विमर्श आश्चर्यजनक लग सकता है। दो बड़े गठबंधन-एनडीए और महागठबंधन के बारे में चर्चा होती है कि इनमें से किसकी सरकार बनेगी। इन दोनों के समानांतर यह चर्चा चलती है कि प्रशांत किशोर किस गठबंधन का क्या बनाएंगे, क्या बिगाड़ेंगे। यह विमर्श की तीसरी धारा है, जिस पर सबसे अधिक समय व्यतीत होता है। दो बड़े गठबंधनों की तरह प्रशांत किशोर की पार्टी जन सुराज के बारे में यह नहीं कहा जा रहा है कि इस नई पार्टी की भी सरकार बन सकती है। अपनी पार्टी की अच्छी चुनावी संभावनाओं की चाह में पीके राज्य का भ्रमण कर रहे हैं। उनकी पार्टी की सक्रियता बढ़ी है। भीड़ देखकर दोनों गठबंधन के नेताओं को भी परेशानी हो रही है। दोनों गठबंधन यह सोचकर बाहरी रूप में निश्चिंत नजर आ रहे हैं कि पीके हमारा नहीं, उनका वोट काटेंगे। यह भी है कि उनका वोट कटेगा तो हमारे गठबंधन को लाभ होगा। लेकिन सच में क्या होगा, इसका सही-सही पता चुनाव परिणाम से ही चल पाएगा। इतनी बात तय है कि पीके दोस्तों और दुश्मनों के दिल में बसे हुए हैं।

वर्ष 2020 और 2025 के विधानसभा चुनाव की स्थिति पर ध्यान दें तो कुछ अंतर साफ साफ नजर आ रहा है। पांच साल पहले एनडीए की संभावनाओं को कमजोर करने वाले चिराग पासवान तन से एनडीए के साथ हैं। लेकिन, उनकी गतिविधियां और राज्य के खास क्षेत्रों में अति सक्रियता को देखते हुए एनडीए उनके मन की थाह नहीं ले पा रहा है। वे राज्य के पिछड़ेपन की व्याख्या करते हैं तो राज्य में एनडीए सरकार के प्रति भी दया नहीं दिखाते हैं। कानून-व्यवस्था की जब आलोचना करते हैं तो उनका सुर पूरी तरह विरोधी महागठबंधन के सुर से मिल जाता है। चिराग की यह अवस्था पीके और उनके जन सुराज को बहुत हद तक आश्वस्त करती है।

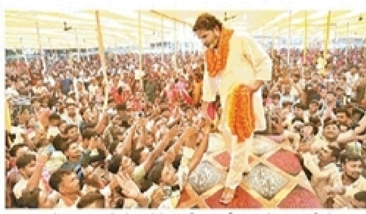

मुजफ्फरपुर में एक जनसभा के दौरान लोगों का अभिवादन स्वीकार करते हुए प्रशांत किशोर। फाइल

इसी क्रम में यह प्रश्न भी पूछ लिया जाता है- क्या चिराग और पीके के बीच कुछ चल रहा है? इस प्रश्न को चिराग और पीके के वक्तव्यों से मजबूती मिलती है, जिसमें एक दूसरे पर प्रहार का कोई अंश उपलब्ध नहीं होता है। दूसरी तरफ एनडीए के धीर-गंभीर नेता इन आशंकाओं को इन टिप्पणियों में रद कर देते हैं- यह सब विधानसभा में अपने दल के लिए अधिक सीट लेने के लिए है। मोलतोल के बाद मनमुताबिक सीटें मिल जाएंगी तो चिराग कहीं नहीं जाएंगे। वैसे भी कहीं नहीं जाएंगे। क्योंकि निश्चित को छोड़ अनिश्चित की ओर जाने का खतरा भला कौन समझदार उठाता है। निश्चित यह कि वर्तमान समीकरण में केंद्रीय कैबिनेट में चिराग का पद सुरक्षित है। राज्य में अगली सरकार एनडीए की बनती है तो चिराग की पार्टी के विधायकों को भी उसमें जगह मिल सकती है। चिराग के साथ के ऐसे लोग, जिन्हें टिकट मिलने की गारंटी है, एनडीए से अलगाव नहीं चाह रहे हैं।

बनाने का तो नहीं, बिगाड़ने का एक हथियार पीके के हाथ में आ सकता है। लेकिन, यह भी दोनों गठबंधनों की ओर से उम्मीदवारों के चयन में होनेवाली चूक पर निर्भर है। महागठबंधन के दलों के बीच जिस तरह से सीटों को लेकर घमासान है, वह जारी रहा तो तय है कि 2020 के विधानसभा चुनाव में उम्मीदवार रहे दो दर्जन से अधिक सक्षम उम्मीदवार इस बार टिकट से वंचित रह जाएंगे। इसके अलावा, दलों की अंदरूनी खींचतान के कारण भी कुछ योग्य उम्मीदवार बेटिकट हो सकते हैं। लगभग यही स्थिति एनडीए के घटक दलों के बीच भी है। एनडीए में किस दल को कितनी सीटें मिलेंगी, यह प्रश्न अनुत्तरित है। अधिक उम्र के कारण भी कुछ विधायक घर बिठाए जा सकते हैं। वहीं, एनडीए के कुछ नेताओं पर टिकट के लिए अपनी संतानों का भी जबरदस्त दबाव है। टिकट की आस में ये क्षेत्र में डट गए हैं। दोनों गठबंधनों के ऐसे ही बेटिकट उम्मीदवारों के दम पर पीके कुछ कर सकते हैं। कोई गठबंधन इस गुमान में रहे कि वोट तो केंद्रीय या प्रांतीय नेतृत्व के दम पर ही मिलता है, यह अंततः भ्रम ही प्रमाणित होता है। चिराग पासवान ने 2020 के विधानसभा चुनाव में इसे प्रमाणित कर दिखा दिया है। उस समय प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी और मुख्यमंत्री नीतीश कुमार साथ साथ चुनाव प्रचार कर रहे थे। परिणाम आया तो एनडीए की सरकार मुश्किल से बन पाई। यह ठीक है कि चिराग की पार्टी बुरी हार की शिकार हुई।

इस समय, जबकि दोनों गठबंधनों के उम्मीदवार के नाम तय होने में बहुत देर है, पीके की 2020 जैसी चिराग की भूमिका की कल्पना तो की ही जा सकती है। हां, इस चेतावनी के साथ कि पीके किसी भी गठबंधन के लिए चिराग पासवान प्रमाणित हो सकते हैं। शर्त यह कि गठबंधनों की तरफ से उम्मीदवारों के चयन में असावधानी बरती जाए। असंतोष बढ़ाने वाली गलतियां की जाएं।

सहकारिता नीति

नए भारत के निर्माण में योगदान

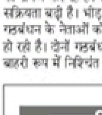

प्रो. कन्हैया त्रिपाठी
चेयर प्रोफेसर, केंद्रीय विश्वविद्यालय, पंजाब एवं राष्ट्रपति के पूर्व विशेष कार्य अधिकारी

गुरुवार को राष्ट्रीय सहकारिता नीति- 2025 राष्ट्र को समर्पित की गई है। देश के समग्र विकास की दिशा में यह एक प्रभावी कदम है। इससे देश के विकास की गति भी तीव्र हो जाएगी

प्रतीकात्मक

लगभग 23 वर्षों की लंबी प्रतीक्षा के बाद अंततः देश को नई राष्ट्रीय सहकारिता नीति मिल गई है। इसका उद्देश्य सहकारिता के सहारे ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूत स्तंभ के रूप में स्थापित करके भारत को वर्ष 2047 तक विकसित राष्ट्र बनाना है। इस नीति का मसौदा विभिन्न क्षेत्रों के विशेषज्ञों से विमर्श के बाद तैयार किया गया है। वहीं गुजरात के आणंद में हाल ही में त्रिभुवन सहकारिता विश्वविद्यालय का भूमि-पूजन हो चुका है।

संयुक्त राष्ट्र ने वर्ष 2025 को अंतरराष्ट्रीय सहकारिता वर्ष के रूप में घोषित किया है। इसकी थीम ही है- सहकारिताएं एक बेहतर विश्व का निर्माण करती हैं। त्रिभुवन सहकारिता विश्वविद्यालय जैसी संकल्पना इस पूरी थीम के साथ न्याय करती है। यह सतत विकास में अग्रणी भूमिका निभाते हुए जन-केंद्रित और आत्मनिर्भर सहकारी उद्यमों का समर्थन है एवं एक ऐसी पीढ़ी का निर्माण करने की कोशिश है जिससे भारत के सभी हितधारक सहकारिता के माध्यम से आने वाली पीढ़ियों के जीवन को समृद्ध बना सकें। सहकारिता वर्ष की थीम जब दी गई थी तो यह सोचा गया था कि एक ऐसी रणनीति बने जिससे समावेशी विकास को बढ़ावा देकर सामुदायिक लचीलेपन को मजबूत करने की सहकारी समितियों की अद्वितीय क्षमता को बढ़ाया जा सके।

श्रमेव सिद्धि : देखा जाए तो श्रम का अपना मूल्य होता है। श्रम किसी से उपकार नहीं चाहता। हमारे शास्त्र कहते हैं- श्रमेव सिद्धि। हमारे देश में सहकार से सिद्धि की संपूर्ण उम्मीद श्रम पर आधारित है। ऐसे में गृह एवं सहकारिता मंत्री अमित शाह 'श्रम से सिद्धि' के साथ 'सहकार से सिद्धि' का अभिमंत्र लेकर संपूर्ण भारत को जागृत कर रहे हैं। आने वाला समय सहकारिता का समय है। सहकारिता के पैरोकारों को इसलिए अपने समर्पित मन से इस दिशा में सोचने की आवश्यकता होगी। किसी भी राष्ट्र का निर्माण उस भूमि पर रहने वाले जीवंत लोगों से सुनिश्चित होता है। हमारे सहकार से समृद्धि का स्वप्न तभी पूर्ण हो सकेगा, जब हम सहकारिता के पैरोकारों की संख्या में वृद्धि करें। नई पहल करें, नए आयामों पर विचार करें।

बेहतर विश्व का निर्माण : आज पूरी दुनिया यह जान चुकी है कि सहकारी उद्यम लोगों को सशक्त बनाते हैं, समुदायों को मजबूत करते हैं। लोकतंत्र, मानव गरिमा, एकजुटता और स्थिरता के मूल्यों को आगे बढ़ाते हैं। साथ मिलकर चलने की खुशी और सहकारिता से जीवन को संवारने की कोशिश वर्ष 1923 से शुरू है। अब तो दुनिया में बहुत बदलाव हुआ है। नए तकनीकी विकास व सूचना-संचार ने सभी को एकीकृत किया है। अब सहकारिता को आसानी से मजबूत किया जा सकता है। एकीकृत होकर नई उपलब्धियों हेतु चेंज-मेकर की भूमिका में अपनी युवा पीढ़ी को सम्मिलित करने की बारी है। भारत अपनी युवा जनसंख्या को यदि सहकारिता से जोड़ लेगी तो दुनिया में भारत युवा सहकारिता आंदोलन के जरिए ही बहुत कुछ हासिल करने की स्थिति में आ जाएगा।

इसी माह संयुक्त राष्ट्र मुख्यालय में यह विमर्श हुआ कि कैसे सहकारी समितियां 2030 एजेंडा और आगामी विश्व सामाजिक शिखर सम्मेलन के अनुरूप समावेशी, सतत विकास को आगे बढ़ा सकती हैं। इस समय दुनिया कई चुनौतियों का सामना कर रही है, जिनमें निरंतर गरीबी, जलवायु आपातकाल, आर्थिक झटके, संघर्ष और बढ़ती असुरक्षा जैसे मुद्दे छाए रहे। अब हम 18वीं सदी के स्काटलैंड या 1895 में लंदन में हुए सहकारिता कांग्रेस और विशिष्ट आंदोलनों की ओर मुड़कर देखें तो उनसे सहकारिता संघर्ष व तत्कालीन परिस्थितियों को समझा जा सकता है। भारत ने भी इसके महत्व को समझा है। केंद्र सरकार अब सहकारिता के माध्यम से आमजन के जीवन में आ रहे बदलाव को भारत में बदलाव के रूप में देख रही है। सहकारिता मंत्री इस संदर्भ में सहकारिता की सफलता की कहानियां न केवल सुन रहे हैं, अपितु दूसरों को प्रेरणा भी दे रहे हैं कि सहकार से सिद्धि कैसे प्राप्त की जा सकती है। यह होता है सतत प्रयास और बदलाव के लिए उद्यम।

प्रकृति के साथ जुड़ाव : राष्ट्रीय सहकारिता नीति 2025 जो सहकार से समृद्धि की कहानी रच रही है, इसकी एक और प्रमुख बात है कि प्राकृतिक खेती को बढ़ावा देने से इंसान और धरती की सेहत अच्छी रखने की अभूतपूर्व कोशिश की जा रही है। इससे पानी का बचाव करते हुए अनाज के उत्पादन में वृद्धि होगी। भारतीय सहकारिता में इस प्रकार केवल मनुष्य की चिंता नहीं है, अपितु सच्चे मायने में प्रकृति, धरती और जीव व जीवन की पुनर्बहाली करने की चेष्टा है। संपूर्णता में देखें तो सहकारिता का सरकार का यह प्रयास भारत में समावेशिता को आगे बढ़ाने जा रहा है, जिससे देश के विकास की गतिशीलता भी कई गुना बढ़ जाएगी।

जागरण जनमत

कल का परिणाम

क्या ब्रिटेन के साथ मुक्त व्यापार समझौता अर्थव्यवस्था के लिए लाभदायक होगा?

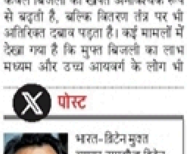

सभी आंकड़े प्रतिशत में।

आज का सवाल

क्या 25 ओटीटी प्लेटफार्म पर प्रतिबंध लगाने से एप/ चैनलों पर अश्लील सामग्री परोसे जाने की प्रवृत्ति पर लगाम लगेगी?

परिणाम जागरण इंटरनेट संस्करण के पाठकों का मत है।

जनपथ

सिर तेजस्वी के चढ़ा दिखता 'सर' का खौफ,
तभी चलाना चाहते 'बायकाट' की तोप।
'बायकाट' की तोप कह रहे वामपंथी,
लगता है इस बार गई पानी में भैंसी!
बिना 'विदेशी हाथ' जन में जाएंगे घिर,
डर यह चढ़ कर बोल रहा है अब उनके सिर!!
- ओमप्रकाश तिवारी

****

चिंतन

झालावाड़ स्कूल हादसे के जिम्मेदारों को सजा मिले

राजस्थान के झालावाड़ के सरकारी स्कूल में हुए भीषण हादसे ने केवल इस राज्य को ही नहीं, बल्कि समूचे देश को झकझोर दिया है। झालावाड़ के पिपलोदी गांव स्थित एक स्कूल की छत ढहने से 7 मासूम बच्चों ने अपनी जान गंवा दी है, वहीं 27 बच्चे घायल हैं। देश गमगीन है। सबसे हैरत की बात यह है कि प्रशासन तभी हरकत में आता है, जब पिपलोदी गांव की तरह कोई बड़ा हादसा होता है। बड़ा सवाल है कि क्या यह महज हादसा है या शिक्षा तंत्र की प्रशासनिक लापरवाही का भयानक अंजाम? राजस्थान के शिक्षा मंत्रालय ने सभी जिलों को लिखित निर्देश दिया था कि बरसात से पहले अपने-अपने क्षेत्र के स्कूलों के भवनों की स्थिति का मौका-मुआयना करें। राजस्थान में अधिकांश प्राइमरी स्कूलों के भवनों की हालत जर्जर है। यह स्थिति देश के अधिकांश अन्य सरकारी स्कूलों के भवनों की भी है। राजस्थान में चिंता की बात है कि पूर्व सीएम वसुंधरा राजे, उनके बेटे सांसद दुष्यंत सिंह, मुख्यमंत्री भजन लाल शर्मा, शिक्षा मंत्री मदन दिलावर के गृह जिले व अपने क्षेत्र के सरकारी स्कूलों में स्थिति खराब है। इस राज्य में पांच साल कांग्रेस व पांच साल भाजपा सत्ता में रहती है, ऐसे में सूबे के सरकारी स्कूलों की दुर्दशा के लिए दोनों ही दलों की सरकारें जिम्मेदार हैं। चुनावी राजनीति में रेवड़ी संस्कृति को बढ़ावा के चलते दलों व सरकारों के फोकस में शिक्षा व स्वास्थ्य जैसे बुनियादी विषय नहीं हैं। राजस्थान सरकार का वित्त वर्ष 2025-26 के लिए प्राथमिक विद्यालय के भवनों की मरम्मत के लिए बजट केवल 225 करोड़ रुपये है, जबकि अनुमान के मुताबिक राज्य के करीब 60 फीसदी से अधिक स्कूल भवनों में सुधार की आवश्यकता है। अभी कहा जा रहा है कि भारी बारिश के चलते पीपलोदी के स्कूल भवन की छत गिर गई, लेकिन राजस्थान में अनेक स्कूलों के भवन जर्जर हालते में हैं। विगत चार महीनों में करीब 700 से अधिक शिकायतें स्कूल भवन को ठीक कराने संबंधी गई हैं, लेकिन अधिकांश मामले में बजट का रोना है। शिक्षा विभाग ने बेशक पांच शिक्षकों को निलंबित कर दिया है। राजस्थान मानवाधिकार आयोग ने स्वतः संज्ञान लेते हुए झालावाड़ जिला कलेक्टर, जिला शिक्षा अधिकारी, शिक्षा निदेशक, और एसपी को नोटिस जारी कर 7 अगस्त तक अनुपालन रिपोर्ट मांगी है, लेकिन क्या जिन बच्चों की जान सरकारी लापरवाही व भ्रष्टाचार के चलते गई है, वो लौट कर आएगी? पीपलोदी गांव के लोग गुस्से में हैं और उनका क्रोधित होना जायज भी है। सरकार स्कूलों, अस्पतालों, पुलों व अन्य सरकारी भवनों की एक नियमित अंतराल पर जांच-परख के लिए नियम क्यों नहीं बनाती है, हम अपने बच्चों, नागरिकों की सुरक्षा से खिलवाड़ कैसे कर सकते हैं। कोई निर्माण हुआ है तो, उसकी आयु भी होगी? देश में सरकारी स्कूलों के भवनों की स्थिति आमतौर पर खराब है। कुछ स्कूलों के भवन इतने जर्जर हैं कि छात्रों की सुरक्षा के लिए खतरा पैदा हो गया है। कई स्कूलों में शिक्षकों की कमी है। सरकारी स्कूलों में अपर्याप्त वित्तपोषण व उत्तरदायित्व की कमी है। सर्व शिक्षा अभियान, मध्याह्न भोजन योजना, प्रौद्योगिकी वर्धित शिक्षा पर राष्ट्रीय कार्यक्रम, प्रज्ञाता, पीएम श्री स्कूल जैसी सरकारी पहलों से भी स्कूलों के बुनियादी ढांचे नहीं सुधर पा रहे हैं। वित्त पोषण के साथ शिक्षा तंत्र को जवाबदेह बनाना जरूरी है। बच्चों की मौत के जिम्मेदारों को सजा मिलनी जरूरी है।

विश्लेषण

उमेश चतुर्वेदी

मतदाता सूची का गहन पुनरीक्षण जरूरी

एक हालिया शोध के अनुसार बिहार में करीब 77 लाख फर्जी वोटर हैं। ये वोटर अल्पसंख्यक वर्ग वाले सिर्फ विदेशी घुसपैठिये ही नहीं है, बल्कि इसमें मृत और अपनी रिहायश छोड़ चुके मतदाता भी हैं। शोधकर्ताओं का कहना है कि ऐसी गड़बड़ियां पूरे देश की मतदाता सूची में हो सकती है। विधु शेखर और मिलन कुमार का शोध अध्ययन, राज्य के आधार कार्ड के अत्यधिक उपलब्धता के आंकड़े कुछ ऐसे तथ्य है, जिनके आलोक में राज्य में जारी गहन पुनरीक्षण को चुनाव आयोग अपने पक्ष में तर्क के रूप में इस्तेमाल कर सकता है। इन संदर्भों में विशेष गहन पुनरीक्षण के विरोध में उतरे राजनीतिक दलों के लिए ज्यादा तर्क-वितर्क की गुंजाइश शायद ही रह पाएगी।

बिहार में जारी मतदाता सूची के विशेष गहन परीक्षण पर विपक्षी दलों की ओर से सवाल न ही उठता तो हैरत होती। यह ठीक है कि चुनाव आयोग ने अपने 24 जून के इस संदर्भ में दिए गए आदेश में बार-बार बदलाव किया है, लेकिन विपक्षी खेमे की ओर से इस पुनरीक्षण पर सवाल उठने की वजह उनकी आशंका है। उन्हें लगता है कि इस पुनरीक्षण के बहाने उनके वोट बैंक को सत्ता पक्ष यानी बीजेपी और जेडीयू के इशारे पर चुनाव आयोग काट देगा। उनकी आशंका पर चर्चा से पहले एक हालिया शोध का भी जिक्र किया जाना जरूरी है, जिसके अनुसार बिहार में करीब 77 लाख फर्जी वोटर हैं। ये वोटर अल्पसंख्यक वर्ग वाले सिर्फ विदेशी घुसपैठिये ही नहीं है, बल्कि इसमें मृत और अपनी रिहायश छोड़ चुके मतदाता भी हैं।

डेमोग्रॉफिक रिकंस्ट्रक्शन एंड इलेक्टोरल रोल इन्फ्लेशन, एस्टीमेटिंग दी लेजिटिमेट वोटर बेस इन बिहार, इंडिया नाम शोध अध्ययन के मुताबिक बिहार की मतदाता सूची में ही ऐसी गड़बड़ियां नहीं है। शोधकर्ताओं का कहना है कि ऐसी गड़बड़ियां पूरे देश की मतदाता सूची में हो सकती हैं। इस शोध अध्ययन को मुंबई के एसपी जैन इंस्टीट्यूट एंड मैनेजमेंट के असिस्टेंट प्रोफेसर विधु शेखर और और आईआईएम,विशाखापत्तनम के असिस्टेंट प्रोफेसर मिलन कुमार ने मिलकर किया है। एसएसआरएन में प्रकाशित यह अध्ययन किसी अनुमान पर नहीं, बल्कि सरकारी आंकड़ों, मसलन राज्य की जन्म और मृत्यु दर के साथ ही राज्य से हुए पलायन और आयु प्रत्याशा के सरकारी आंकड़ों के गहन अध्ययन और विश्लेषण पर आधारित है। अध्ययन के मुताबिक, बिहार में इस समय करीब सात करोड़ 89 लाख वोटरों का नाम मतदाता सूची में दर्ज है। इनमें से करीब 77 हजार नाम फर्जी हैं। यानी ये मतदाता या तो मर चुके हैं या बरसों पहले से अपनी बताई या दर्ज जगह से पलायन करके कहीं और जा बसे हैं। फर्जी या गलत मतदाताओं का यह आंकड़ा करीब 9.7 प्रतिशत होता है। इसका मतलब यह हुआ कि करीब दस प्रतिशत मतदाता ज्यादा हैं या असल में हैं ही नहीं। राज्य की हर विधानसभा सीट पर करीब तीस हजार मतदाताओं का नाम गलत तरीके से दर्ज है। बिहार में विधानसभा की 243 सीटें हैं।

विधानसभाओं में कुछ सौ मतदाताओं का अंतर ही जीत-हार पर असर डाल देता है। साल 2020 के विधानसभा चुनावों में करीब बीस प्रतिशत सीटों पर जीत और हार का अंतर महज ढाई फीसद तक ही था। इनमें से 17 सीटों पर जीत तो एक प्रतिशत के कम वोट से ही हुई थी। शोधकर्ताओं को आशंका है कि अगर गहन पुनरीक्षण में इन मतदातओं के नाम नहीं काटे गए तो उनके नाम पर चुनावी नतीजों को बदला जा सकता है। राज्य में पिछली बार मतदाता सूची का विशेष गहन पुनरीक्षण 2003 में हुआ था। उस समय राज्य में करीब तीन करोड़ 41 लाख मतदाता थे।

राज्य की मौजूदा जन्म और मृत्यु दर के हिसाब से इसके बाद 4.83 जुड़ने चाहिए थे। इसके साथ ही सरकारी आंकड़ों के अनुसार इन वर्षों में राज्य से करीब एक करोड़ 12 लाख वोटरों ने पलायन किया है। उन्होंने अपना स्थायी ठिकाना राज्य से बाहर बना लिया है। इसे दिल्ली, मुंबई, पंजाब जैसे शहरों और राज्यों में देखा भी जा रहा है, जहां भारी संख्या में बिहारी मूल के मतदाता

हैं। इस शोध के मुताबिक, पुराने वोटरों, जन्म-मृत्यु दर की गणना और पलायन के बाद के आंकड़ों को मिलाकर राज्य में असल मतदाताओं की संख्या सात करोड़ 12 लाख के ही आसपास बैठती है। इस लिहाज से कह सकते हैं कि राज्य में जो 77 लाख ज्यादा वोटरों के नाम हैं, वे इन वैज्ञानिक तथ्यों के आधार पर गड़बबड़ हैं। विधु शेखर और मिलन कुमार के अध्ययन के अनुसार राज्य में आधार कार्ड की उपलब्धता को भी जोड़ा जा सकता है। यह भी राज्य में फर्जी वोटरों की ओर इशारा करता है। वैसे मतदाता सूची में शामिल होने के लिए आधार कार्ड और राशन कार्ड को वैध प्रमाण पत्र माना जाता है। लेकिन इस तथ्य से भी इनकार नहीं किया जा सकता है कि भारी संख्या में फर्जी राशन कार्ड हो सकते हैं या आधार कार्ड भी बन सकते हैं।

राज्य के सीमांचल के जिले मसलन अररिया, पूर्णिया, कटिहार और किशनगंज जिलों में मुस्लिम आबादी करीब 39 से लेकर 68 प्रतिशत तक है, लेकिन इनकी सीमाएं पश्चिम बंगाल और नेपाल से जुड़ी हैं। इस वजह से इस इलाके में घुसपैठ का भी आरोप लगता रहा है। बिहार सरकार द्वारा जाति-आधारित सर्वेक्षण के दौरान एकत्र किए गए आधिकारिक आंकड़ों पर नजर डालें तो इस आरोप में दम नजर आता है। इस आंकड़े के मुताबिक, राज्य का औसत आधार कवरेज लगभग 94 प्रतिशत है, जबकि 68 प्रतिशत मुस्लिम आबादी वाले किशनगंज में कुल जनसंख्या से करीब 105.16 प्रतिशत आधार है। इसी तरह, कटिहार में 45 प्रतिशत और अररिया में 50 प्रतिशत मुस्लिम आबादी है, लेकिन यहां आधार कुल जनसंख्या का करीब 101.92 और 102.23 प्रतिशत ज्यादा है। सीमांचल के ही जिले पूर्णिया में 39 प्रतिशत मुस्लिम आबादी है, लेकिन यहां आधार कुल जनसंख्या का 101 प्रतिशत है।

आंकड़ों के विश्लेषण से पता चलता है कि सीमांचल हर 100 निवासी पर 120 से अधिक आधार कार्ड हैं। यही वजह है कि चुनाव आयोग ने विशेष गहन पुनरीक्षण अभियान में इन जिलों में मतदाता सूची में नाम के सत्यापन के लिए आधार कार्ड को अनिवार्य नहीं माना है। संविधान के अनुच्छेद 324 के तहत मिले अधिकारों के तहत चुनाव आयोग राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति, संसद और विधान मंडलों का चुनाव कराता है। इसके लिए उसे जन प्रतिनिधित्व कानून 1951 के तहत मतदाता सूची बनाने और उसे अद्यतन करने का अधिकार मिला है। स्वच्छ लोकतंत्र के लिए जरूरी स्वच्छ और स्पष्ट मतदाता सूची है। चुनाव आयोग का यह वैधानिक दायित्व है कि फर्जी वोटरों को मतदाता सूची से बाहर करे। आज की राजनीति अपने वोटरों को साधने तक ही सीमित नहीं रही, बल्कि अपने प्रतिबद्ध वोटरों की रक्षा करने की हो गई है। बिहार में माना जाता है कि एमवाई समीकरण यानी मुस्लिम और यादव वोटर राष्ट्रीय जनता दल का समर्थक है। विपक्षी दलों को आशंका है कि बीजेपी के इशारे पर उसके इन्हीं वोटरों को काटा जा सकता है। चुनाव आयोग के प्रमुख टीएन शेषन और केजे राव जैसे अधिकारियों के आने के पहले तक राज्य में बूथ लूट की घटनाएं खुलेआम होती थीं। अब तो खैर वैसा नहीं होता, लेकिन फर्जी वोटरों के नाम पर कुछ भी हो सकता है। दबंग उम्मीदवार अपने पक्ष में फर्जी या मृत वोटरों के नाम पर मतदान कराकर अपने पक्ष में नतीजे मोड़ सकते हैं। विधु शेखर और मिलन कुमार का शोध अध्ययन, राज्य के आधार कार्ड के अत्यधिक उपलब्धता के आंकड़े कुछ ऐसे तथ्य हैं, जिनके आलोक में राज्य में जारी गहन पुनरीक्षण को चुनाव आयोग अपने पक्ष में तर्क के रूप में इस्तेमाल कर सकता है। इन संदर्भों में विशेष गहन पुनरीक्षण के विरोध में उतरे राजनीतिक दलों के लिए ज्यादा तर्क-वितर्क की गुंजाइश शायद ही रह पाएगी।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार व स्तंभकार हैं, ये उनके अपने विचार हैं।)
लेख पर अपनी प्रतिक्रिया edit@haribhoomi.com पर दे सकते हैं।

कारगिल युद्ध विशेष

डॉ. संदीप मलिक व डॉ. विवेक बल्यान

अदम्य साहस, बलिदान और भारत की गौरवपूर्ण विजय

भारत के सैन्य इतिहास में 26 जुलाई 1999 वो ऐतिहासिक दिन है जिसे कभी भुलाया नहीं जा सकता। यह वह दिन था, जब भारतीय सेना ने अपने अदम्य साहस, रणनीतिक कौशल और असाधारण पराक्रम का प्रदर्शन करते हुए पाकिस्तान के नापाक इरादों को ध्वस्त करते हुए विजय पताका लहराई थी। पाकिस्तान पर यह जीत केवल भारतीय सैन्य क्षमता सफलता ही नहीं, बल्कि यह हमारे राष्ट्रीय गौरव, अखंडता और एकता की मिसाल बन गई। कारगिल युद्ध एक ऐसा संघर्ष था जिसे पाकिस्तान ने छद्म युद्ध के रूप में भारत पर थोपा था। मई 1999 में आरंभ हुआ यह युद्ध लगभग दो महीने तक चला और 26 जुलाई को भारत ने तमाम विषम परिस्थितियों के बावजूद निर्णायक विजय के साथ समाप्त किया।

पाकिस्तान के साथ भारत के इस संघर्ष की शुरुआत 3 मई 1999 को तब हुई, जब एक स्थानीय चरवाहे ने भारतीय सेना को कारगिल क्षेत्र में पाकिस्तानी घुसपैठ की सूचना दी। चरवाहे की सूचना पर जांच के लिए भेजी गई पेट्रोलिंग टीम पर पाकिस्तानी सैनिकों ने हमला कर दिया और पांच भारतीय जवानों की निर्मम हत्या कर दी गई। पाकिस्तान की इस घुसपैठ की योजना बेहद सुनियोजित थी। इसका प्रमाण यह था कि पाकिस्तान ने अपने सैनिकों को कश्मीर के आतंकवादियों की आड़ में कारगिल, द्रास, ककसर और बटालिक जैसे क्षेत्रों में भेजा। उनका उद्देश्य था श्रीनगर-लेह राजमार्ग पर नियंत्रण पाकर सियाचिन और लेह को भारत से काट देना। साथ ही, पाकिस्तान इस युद्ध के माध्यम से अंतरराष्ट्रीय स्तर पर कश्मीर मुद्दे का अंतरराष्ट्रीयकरण करना चाहता था। हालांकि पाकिस्तान ने शुरू में इसे कश्मीर के 'मुजाहिदीन' की कार्रवाई कहकर पल्ला झाड़ने की कोशिश की, लेकिन जल्द ही यह स्पष्ट हो गया कि इस दुस्साहस के पीछे पाकिस्तान की सेना थी, जिसका नेतृत्व जनरल परवेज मुशर्रफ कर रहे थे।

भारत ने पाकिस्तानी घुसपैठियों को खदेड़ने के लिए 'ऑपरेशन विजय' की शुरुआत की। इस ऑपरेशन में भारतीय थलसेना और वायुसेना दोनों ने निर्णायक भूमिका निभाई। भारतीय वायुसेना ने 26 मई 1999 से हवाई कार्रवाई शुरू की, जिसमें मिग-27 और मिग-29 जैसे लड़ाकू विमानों से दुश्मन के ठिकानों पर बमबारी की गई। वहीं, थलसेना ने अत्यंत कठिन भौगोलिक परिस्थितियों 18,000 फीट की ऊंचाई, बर्फीली पहाड़ियों और दुर्गम दर्रों में युद्ध करते हुए टोलोलिंग, प्वाइंट 5140, प्वाइंट 4875 और टाइगर हिल जैसी सामरिक दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण चोटियों को पुनः अपने नियंत्रण में लेकर अपने पराक्रम का परिचय दिया। कारगिल के इस युद्ध में भारतीय सेना ने 2.5 लाख से अधिक गोलियां दागीं, 300 से अधिक मोर्टार, तोप और रॉकेट लॉन्चरों का इस्तेमाल करते हुए 5000 बम गिराए। प्रतिदिन औसतन हर मिनट एक राउंड फायरिंग होती रही। पाकिस्तान के साथ यह संघर्ष आधुनिक सैन्य इतिहास के सबसे कठिन युद्धों में से एक माना जाता है। 26 जुलाई 1999 को अंततः पाकिस्तान को पीछे हटना पड़ा और भारत ने विजय पताका फहराई लेकिन यह विजय सस्ती नहीं थी। 527 वीर सैनिकों ने अपने प्राणों की आहुति दी और 1363 जवान घायल हुए।

कई वीरों को उनकी असाधारण वीरता के लिए भारत सरकार द्वारा सम्मानित किया गया, जिनमें परमवीर चक्र से सम्मानित कैप्टन विक्रम बत्रा (मरणोपरांत), लेफ्टिनेंट मनोज कुमार पांडे (मरणोपरांत), ग्रेनेडियर योगेंद्र सिंह यादव व राइफलमैन संजय कुमार का नाम शामिल था। कारगिल युद्ध ने यह साफ कर दिया कि भारत की संप्रभुता और सुरक्षा के साथ कोई समझौता नहीं किया जा सकता। पाकिस्तान की साजिश को अंतरराष्ट्रीय समुदाय ने भी नकारा और भारत की स्थिति को नैतिक और कूटनीतिक समर्थन प्राप्त हुआ। यह युद्ध भारत की सैन्य ताकत के साथ-साथ उसकी राजनीतिक परिपक्वता और लोकतांत्रिक मूल्यों की जीत भी थी।

भारत की जीत को प्रतिवर्ष 26 जुलाई को 'कारगिल विजय दिवस' के रूप में मनाया जाता है। यह दिन न केवल हमें हमारे शहीदों के बलिदान की याद दिलाता है, बल्कि हमें यह भी सिखाता है कि एकजुटता, धैर्य, और अद्वितीय साहस के साथ कोई भी युद्ध जीता जा सकता है। कारगिल युद्ध भारत की सीमाओं की रक्षा में नतमस्तक हो जाने वाले वीर सपूतों की अमर गाथा है यह इतिहास का हिस्सा नहीं, भारत की आत्मा का हिस्सा है।

(लेखक द्वय जम्मू-कश्मीर अध्ययन केंद्र के शैक्षणिक प्रमुख तथा सचिव हैं, ये उनके अपने विचार हैं।)

जीवन का प्रथम अनुबंध किसको माना है?

संकलित

दर्शन

अनुबंध चतुष्टय में 'अधिकारी' को प्रथम अनुबंध स्वीकार किया गया है। मानव की आध्यात्मिक और लौकिक यात्रा के निर्विघ्न संचालन में इसकी महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। लोक में इसके लिए योग्यता या पात्रता पद का प्रयोग होता है, जिसका तात्पर्य है, किसी कार्य के निष्पादनार्थ पात्रता प्राप्त करना।सामान्यतः प्रत्येक कार्य के लिए प्रत्येक व्यक्ति पात्र नहीं होता। इसलिए अनधिकारी व्यक्ति द्वारा किया गया कार्य सफल और लोकमंगलकारी हो, यह आवश्यक नहीं, परंतु अधिकारी (पात्र) व्यक्ति द्वारा किया गया प्रत्येक कार्य सफल भी होता है और लोकमंगलकारी भी। इसलिए अधिकारी आत्मिक और जागतिक कल्याण का मार्ग प्रशस्त करने वाला मानव जीवन का प्रथम अनुबंध है। इसीलिए इसे शास्त्रों में विशेष महत्व दिया गया है। वेदांत में अधिकारी को परिभाषित करते हुए कहा गया-जिसने विधिवत ज्ञान प्राप्त कर काम्य एवं निषिद्ध कर्मों का परित्याग कर दिया है। नित्य, नैमित्तिक और उपासनादि कर्म करने से जिसकी बुद्धि परिष्कृत और अंतःकरण निर्मल हो चुका है, ऐसा पापरहित व्यक्ति ही विशिष्ट ज्ञान का अधिकारी है। विश्वामित्र आदि ऋषियों ने अधिकारी समझकर ही राम को विविध आयुध प्रदान किए, जिससे उनका दुरुपयोग न हो सके। जैसे अधिकारी व्यक्ति का ज्ञान लोकमंगल के लिए होता है, उसी प्रकार अधिकारी को प्रदान की गईं शक्तियां समाज, देश और मानवता की रक्षा के लिए होती हैं। इतिहास साक्षी है कि जब भी अनधिकारी को शक्तियां प्रदान की गई हैं, उनका दुरुपयोग ही हुआ है।

बहुत सारे काम के बदले किसी एक काम को बेहतर करे

संकलित

प्रेरणा

पुराने समय में भारद्वाज मुनि थे। वे देवगुरु बृहस्पति के पुत्र थे। भारद्वाज बहुत सारा ज्ञान हासिल करना चाहते थे। उनकी सोच ये थी कि उन्हें संसार की सारी बातों का ज्ञान हो जाए। इसके लिए वे लगातार अध्ययन करते रहते थे। एक दिन बृहस्पति ने अपने पुत्र भारद्वाज से कहा कि पूरे संसार का ज्ञान वेदों में है। अगर तुम वेद पढ़ लोगे तो समझ लो कि तुमने पूरा ज्ञान हासिल कर लिया है। पिता की बात मानकर भारद्वाज वेद पढ़ने लगे। भारद्वाज मुनि की संकल्प शक्ति और पढ़ाई की एकाग्रता देखकर देवराज इंद्र प्रसन्न हो गए और वे भारद्वाज के सामने प्रकट हुए। इंद्र ने कहा कि मैं तुम्हारी लगन देखकर बहुत प्रसन्न हूं। तुम मुझसे कोई भी वर मांग सकते हो। भारद्वाज ने इंद्र से कहा कि संसार में ज्ञान बहुत सारा है, लेकिन मेरी उम्र बहुत कम है। कृपया करके मेरी उम्र सौ साल बढ़ा दीजिए। इंद्र ने भारद्वाज की उम्र सौ वर्ष और बढ़ा दी। भारद्वाज मुनि को ज्ञान हासिल करते-करते सौ वर्ष भी बीत गए। इसके बाद देवराज इंद्र ने उनकी उम्र सौ साल और बढ़ा दी। अगले सौ साल और बीत गए, लेकिन भारद्वाज को पूरा ज्ञान नहीं मिल सका। जब अगले 100 भी बीत गए गए, तब इंद्र भारद्वाज के सामने प्रकट हुए और बोले कि भारद्वाज सामने तीन पहाड़ हैं। क्या हम इन पहाड़ों से एक मुट्ठी मिट्टी लेकर इन पहाड़ों की व्याख्या कर सकते हैं? ये संभव नहीं है। ठीक इसी तरह संसार का ज्ञान है। संसार का ज्ञान अथाह है। किसी एक व्यक्ति के लिए पूरा ज्ञान हासिल करना संभव नहीं है।

अंतर्मन

आज की पाती

विमानन क्षेत्र में सुधार समीक्षा की दरकार

हाल में बोइंग विमान से जुड़ी एक घटना ने वैश्विक विमानन उद्योग, विशेषकर बोइंग की विश्वसनीयता पर फिर से सवाल खड़े कर दिए हैं। यह घटना न केवल यात्रियों की सुरक्षा को लेकर चिंता बढ़ाती है, बल्कि यह भी दर्शाती है कि तकनीकी दिग्गज बोइंग के विमान लगातार दुर्घटनाओं के घेरे में क्यों आते जा रहे हैं। बोइंग विमान को लेकर उठ रहे प्रश्न केवल एक कंपनी तक सीमित नहीं हैं, बल्कि यह संपूर्ण विमानन प्रणाली, उसकी निगरानी और जवाबदेही पर सवाल खड़े करते हैं। नागरिक विमानन महानिदेशालय को चाहिए कि वह बोइंग विमानों की संपूर्ण सुरक्षा समीक्षा करवाए, पुराने मॉडलों की जांच कराए और तय करे कि तकनीकी संदिग्ध विमान को उड़ान से पहले दोबारा जांचा जाए।

-संकेत अग्रवाल, जगदलपुर

करंट अफेयर

फलस्तीन को एक राष्ट्र के रूप में मान्यता देगा फ्रांस

फ्रांस के राष्ट्रपति एमैनुएल मैक्रों ने घोषणा की कि उनका देश फलस्तीन को एक राष्ट्र के रूप में मान्यता देगा। इजराइल ने फ्रांस के इस फैसले की निंदा की है। इजराइल के हमले के कारण खाद्यान्न एवं आवश्यक सामग्री की आपूर्ति के संकट से जूझ रहे गाजा में मौजूदा हालात को लेकर दुनिया भर के देशों में व्याप्त आक्रोश के बीच फ्रांस के इस फैसले को साहसिक कूटनीतिक कदम माना जा रहा है। मैक्रों ने सोशल मीडिया मंच 'एक्स' पर एक पोस्ट में कहा कि वह सितंबर में संयुक्त राष्ट्र महासभा में इस फैसले को औपचारिक रूप देंगे। उन्होंने लिखा, ''आज सबसे जरूरी बात यह है कि गाजा में युद्ध रुके और आम नागरिकों की जान बचे।'' गाजा में युद्ध और मानवीय संकट बढ़ने के कारण अधिकतर देशों के कई सांकेतिक कदम इजराइल पर कूटनीतिक दबाव डालने वाले रहे हैं। फ्रांस अब फलस्तीन को मान्यता देने वाली सबसे बड़ी पश्चिमी शक्ति बन गया है और उसका यह कदम अन्य देशों के लिए भी ऐसा करने का मार्ग प्रशस्त कर सकता है। वर्ष 1967 के पश्चिम एशिया युद्ध में इजराइल ने वेस्ट बैंक, पूर्वी यरुशलम और गाजा पर कब्जा कर लिया था और फलस्तीनी कब्जा किए गए इन क्षेत्रों को मिलाकर एक स्वतंत्र राष्ट्र की मांग कर रहे हैं।

ऑफ बीट

क्या चैटजीपीटी हमें मूर्ख बना रहा है?

द अटलांटिक ने 2008 में एक विचारोत्तेजक मुख्य पृष्ठ लेख के साथ विवाद को जन्म दिया : क्या गूगल हमें मूर्ख बना रहा है? लेखक निकोलस कार्र ने सुझाव दिया कि इसका उत्तर हां है, तथा तर्क दिया कि सर्च इंजन जैसी प्रौद्योगिकी अमेरिकी लोगों की गहराई से सोचने और ज्ञान को बनाए रखने की क्षमता को क्षीण कर रही है। कार्र की चिंता का मूल यह विचार था कि लोगों को अब तथ्यों को याद रखने या सीखने की जरूरत नहीं है क्योंकि वे उन्हें तुरंत ऑनलाइन खोज सकते हैं। हालांकि इसमें कुछ सच्चाई हो सकती है, लेकिन सर्च इंजन अब भी उपयोगकर्ताओं से परिणामों की व्याख्या और संदर्भ निर्धारण के लिए आलोचनात्मक सोच की अपेक्षा करते हैं। आज की बात करें तो, एक और भी परिवर्तनकारी तकनीकी बदलाव हो रहा है। चैटजीपीटी जैसी कृत्रिम मेधा (एआई) जनित सामग्री के सामने आने के साथ, इंटरनेट उपयोगकर्ता केवल स्मृति का ही आउटसोर्सिंग नहीं कर रहे हैं - बल्कि वे सोच का भी आउटसोर्सिंग कर रहे हैं। एआई जनित सामग्री तैयार करने वाले सॉफ्टवेयर केवल जानकारी प्रेषित नहीं करते बल्कि उसे सृजित भी कर सकते हैं, उसका विश्लेषण भी कर सकते हैं और उसका सारांश भी तैयार कर सकते हैं। यह एक बुनियादी बदलाव का प्रतिनिधित्व करता है।

ट्रेंड

पीपीपी मॉडल

स्वास्थ्य के क्षेत्र मे आज हमारा पीपीपी मॉडल पूरे देश के लिए एक उदाहरण बन रहा है। हमारी सरकार ने निर्णय लिया है कि प्रदेश मे पीपीपी मॉडल पर मेडिकल कॉलेज खोले जाएंगे, जिसमे अब तक 4 मेडिकल कॉलेज खुल चुके है।

-डा. मोहन यादव, सीएम, मप्र

कानून मंत्री का बयान सही

देश के कानून मंत्री का कल संसद मे दिया गया बयान उचित एवं सराहनीय है, जिसमे उन्होंने कहा है कि संविधान की प्रस्तावना से सेक्युलरिज्म (धर्मनिरपेक्षता) शब्द हटाने की सरकार की न कोई नीयत है और न ही इस पर विचार किया जा रहा है।

-मायावती, पूर्व सीएम, उप्र

इलेक्शन चोरी

हिंदुस्तान मे इलेक्शन चोरी किए जा रहे है, ये सच्चाई है! महाराष्ट्र मे कैसे मैच फिक्सिंग हुई, हमने सबको दिखाया। बिहार मे एसआईआर के नाम पर एससी, एसटी, ओबीसी और अल्पसंख्यक भाइयों-बहनों के वोट चुराए जा रहे है।

-राहुल गांधी, सांसद, कांग्रेस

व्यापार समझौता

भारत-ब्रिटेन मुक्त व्यापार समझौता वास्तव मे वर्तमान ब्रिटिश लेबर सरकार को पतन से बचाता है। एक पूर्व उपनिवेश (भारत) उस उपनिवेशवादी (इंग्लैंड) की अर्थव्यवस्था को सहारा देता है, जिसने कभी भारतीय अर्थव्यवस्था को तबाह कर दिया था!! बधाई।

-शेखर कपूर, फिल्मकार

अपने विचार
हरिभूमि कार्यालय
टिकरापारा, रायपुर में पत्र के माध्यम से या फैक्स : 0771-42422221 पर या सीधे मेल से aapkepatra.haribhoomi@gmail.com पर भेज सकते हैं।

पायनियर
नई दिल्ली, शनिवार, 26 जुलाई 2025

मोदी का यूके दौरा

रिश्तों का नया दौर

शायद किसी भी देश ने भारत के निर्माण में यूनाइटेड किंगडम जितना प्रभाव नहीं छोड़ा है। हालांकि वे सात दशक से भी ज्यादा समय पहले भारत से चले गए थे, फिर भी ब्रिटेन की उपस्थिति अभी भी महसूस की जा सकती है। भारत-ब्रिटेन संबंध अधिकांशतः सहज रहे हैं, लेकिन व्यावसायिक रूप से उतनी प्रगति नहीं कर पाए जितनी होनी चाहिए थी। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की यूनाइटेड किंगडम यात्रा भारत-ब्रिटेन संबंधों के एक निर्णायक मोड़ पर इस विसंगति को दूर करती है। वाणिज्य और उद्योग मंत्री पीयूष गोयल के साथ, मोदी की इस यात्रा का सबसे बड़ा लाभ एक मुक्त व्यापार समझौते पर हस्ताक्षर होना है, एक ऐसा ऐतिहासिक कदम जो न केवल आर्थिक सहयोग को गहरा करता है, बल्कि हाल के दशकों में महत्वपूर्ण रूप से विकसित हुए ऐतिहासिक संबंधों की भी पुष्टि करता है। भारत और ब्रिटेन के बीच संबंध एक साझा, यद्यपि जटिल, औपनिवेशिक अतीत में निहित हैं। स्वतंत्रता संग्राम से लेकर उत्तर-औपनिवेशिक जीवंत लोकतंत्र के रूप में उभरने तक, भारत ने एक लंबा सफर तय किया है। पिछले दो दशकों में, यह संबंध आपसी सम्मान, बढ़ती आर्थिक साझेदारी और अभिसरित रणनीतिक हितों पर आधारित हो गए हैं। ब्रिटेन एक जीवंत भारतीय प्रवासी समुदाय का घर है जो व्यापार, राजनीति और शिक्षा जगत में प्रभावशाली भूमिका निभाता है और भारत ब्रिटेन के सबसे मूल्यवान आर्थिक और भू-राजनीतिक साझेदारों में से एक के रूप में उभर रहा है। मुक्त व्यापार समझौते पर हस्ताक्षर इस विकसित होते रिश्ते में एक ऐतिहासिक मील का पत्थर है। तीन वर्षों की गहन बातचीत के बाद संपन्न हुआ यह समझौता यूरोपीय संघ से बाहर निकलने के बाद से ब्रिटेन द्वारा किया गया सबसे महत्वाकांक्षी व्यापार समझौता है। भारत के लिए, यह एक विकसित पश्चिमी अर्थव्यवस्था के साथ सबसे व्यापक मुक्त व्यापार समझौतों में से एक है, जो वैश्विक आर्थिक मंच पर नई दिल्ली के बढ़ते आत्मविश्वास को दर्शाता है। ब्रिटिश संसद द्वारा अनुमोदित होने के बाद, यह मुक्त व्यापार समझौता वस्तुओं और सेवाओं की एक विस्तृत श्रृंखला पर शुल्क हटा देगा। लगभग 99 प्रतिशत भारतीय उत्पाद, विशेष रूप से चमड़े के सामान, वस्त्र, जूते और वस्त्र जैसे श्रम-प्रधान निर्यात, ब्रिटेन के बाजार में शुल्क-मुक्त पहुँच प्राप्त करेंगे। इससे भारत के विनिर्माण और निर्यात क्षेत्रों को उल्लेखनीय रूप से बढ़ावा मिलेगा, जिससे रोजगार और आर्थिक विकास के नए अवसर पैदा होंगे। बदले में, ब्रिटेन को व्हिस्की और प्रीमियम ऑटोमोबाइल जैसे उच्च-मूल्य वाले निर्यातों पर शुल्क में कमी का लाभ मिलेगा। इस समझौते से भारतीय बाजार में ब्रिटिश कंपनियों के लिए बाजार पहुँच और नियमन आसान होने की भी उम्मीद है, जो दुनिया की सबसे तेजी से बढ़ती उपभोक्ता अर्थव्यवस्थाओं में से एक है। महत्वपूर्ण बात यह है कि इस व्यापार समझौते से 2030 तक द्विपक्षीय व्यापार दोगुना होकर 120 अरब डॉलर हो जाएगा - एक ऐसा लक्ष्य जो भारत-ब्रिटेन वाणिज्य के पैमाने और गहराई को नए सिरे से परिभाषित करेगा। वस्तुओं के अलावा, यह समझौता गतिशीलता और कराधान से जुड़ी लंबे समय से चली आ रही चिंताओं का भी समाधान करता है। दोहरे योगदान समझौते से अब भारतीय कंपनियों और उनके कर्मचारियों को ब्रिटेन में सामाजिक सुरक्षा शुल्क का भुगतान करने से छूट मिलेगी - जो भारतीय उद्योग की लंबे समय से लंबित मांग थी। इससे ब्रिटेन में कार्यरत लगभग 1,000 भारतीय कंपनियों का परिचालन बोझ कम होगा, जिन्होंने वहां 2 अरब डॉलर से अधिक का निवेश किया है। फिर भी, मोदी की यात्रा का महत्व अर्थशास्त्र से कहीं आगे जाता है। यह तेजी से बदलती वैश्विक व्यवस्था में दोनों देशों के बीच राजनीतिक और रणनीतिक विश्वास के नवीनीकरण का संकेत देता है। हाल के वर्षों में, दोनों पक्षों ने रक्षा, साइबर सुरक्षा, शिक्षा और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में सहयोग को तीव्र किया है। मोदी की यात्रा ने इन सहयोगों को नई गति प्रदान की है और दीर्घकालिक रणनीतिक अभिसरण के लिए मंच तैयार किए हैं। यह नया जुड़ाव ब्रेक्सिट के बाद ब्रिटेन के बदलते वैश्विक दृष्टिकोण को भी उजागर करता है, जिसमें भारत उसके हिंद-प्रशांत दृष्टिकोण का एक केंद्रीय स्तंभ बनकर उभर रहा है। भारत के प्रति लंदन का झुकाव न केवल आर्थिक व्यावहारिकता को दर्शाता है, बल्कि भारत के बढ़ते भू-राजनीतिक प्रभाव की मान्यता को भी दर्शाता है। भारत के लिए, व्यापार, प्रौद्योगिकी और बहुपक्षीय मामलों में ब्रिटेन को एक विश्वसनीय और दूरदर्शी भागीदार के रूप में शामिल करना उसकी विदेश नीति को और गहराई प्रदान करता है। जैसे-जैसे भारत और ब्रिटेन एक अधिक परस्पर निर्भर और बहुध्रुवीय विश्व में कदम रख रहे हैं, यह यात्रा एक गहरे, व्यापक और अधिक लचीले द्विपक्षीय संबंधों की नींव रखती है।

हिन्दी बनाम मराठी: भाषा पर राजनीति

भारत की भाषाई विविधता इसकी ताकत और जटिलता दोनों है। 22 आधिकारिक रूप से मान्यता प्राप्त भाषाओं, 10,000 से अधिक लोगों द्वारा बोली जाने वाली 121 भाषाओं और 19,500 से अधिक दर्ज मातृभाषाओं के साथ, विभिन्न क्षेत्रों के बीच संचार एक बड़ी चुनौती बना हुआ है।

रमाकांत चौधरी
लेखक, वरिष्ठ पत्रकार हैं।

जैसे जैसे चुनाव नजदीक आ रहे हैं, महाराष्ट्र की राजनीति भाषा को हथियार बना रही है, और प्रवासी मजदूरों को एक ऐसे कथानक का खामियाजा भुगतना पड़ रहा है जो भारत के संवैधानिक मूल्यों के विपरीत है।

भाषा की राजनीति भारत में लंबे समय से एक विवादास्पद मुद्दा रही है, जिसका अक्सर निहित स्वार्थों द्वारा चुनावी लाभ और राजनीतिक स्वार्थसिद्धि के लिए क्षेत्रीय भावनाओं को भड़काने के लिए इस्तेमाल किया जाता है।

महाराष्ट्र, एक ऐसा राज्य जिसका नाम ही हिंदी शब्द राष्ट्र से लिया गया है, में भाषाई विभाजन को सामाजिक अशांति को बढ़ावा देने के लिए हथियार बनाया जा रहा है, खासकर चुनाव नजदीक आते ही। राज्य के आर्थिक ताने-बाने का अभिन्न अंग माने जाने वाले हिंदी भाषी प्रवासी मजदूरों को निशाना बनाकर हाल ही में हुई हिंसक घटनाओं ने महाराष्ट्र की एक प्रगतिशील और समावेशी केंद्र की छवि पर कलंक लगा दिया है।

ये हमले, जो अक्सर राज ठाकरे की महाराष्ट्र नवनिर्माण सेना (एमएनएस) और उद्धव ठाकरे की शिवसेना (यूबीटी) जैसी पार्टियों से जुड़े हाशिये के तत्वों द्वारा किए जाते हैं, भाषाई अंधराष्ट्रवाद के चिंताजनक उभार को उजागर करते हैं—ऐसा अंधराष्ट्रवाद जो देश के अनेकता में एकता के पोषित आदर्श वाक्य को कमजोर करता है और भारत की वैश्विक छवि के लिए खतरा है, खासकर जब यह एक पृथ्वी, एक परिवार, एक भविष्य के दृष्टिकोण का समर्थन करता है।

भारत की वित्तीय राजधानी मुंबई और एक प्रमुख औद्योगिक केंद्र पुणे का घर होने के कारण, महाराष्ट्र अपनी आर्थिक मजबूती का बहुत बड़ा श्रेय प्रवासी श्रमिकों को देता है। ये श्रमिक, जिनमें से कई उत्तर प्रदेश, बिहार और झारखंड जैसे हिंदी भाषी राज्यों से आते हैं, निर्माण, विनिर्माण और सेवाओं सहित प्रमुख क्षेत्रों की रीढ़ हैं। अनुमान बताते हैं कि प्रवासी श्रमिक भारत के सकल घरेलू उत्पाद में लगभग 10 प्रतिशत का योगदान करते हैं, राजनीतिक लाभ के लिए अक्सर की जाने वाली इन घटनाओं ने राष्ट्रीय आक्रोश को जन्म दिया है। इससे भी ज्यादा चिंताजनक बात यह है कि कानून प्रवर्तन एजेंसियों की निष्क्रियता ने ऐसे तत्वों को और बढ़ावा दिया है। जवाबदेही की यह कमी न केवल अपराधियों को बचाती है, बल्कि एक प्रगतिशील और समावेशी राष्ट्र के रूप में भारत की छवि को भी नुकसान पहुंचाती है—खासकर तब जब देश खुद को सक्रिय रूप से विकसित भारत के रूप में प्रचारित कर रहा है। बृहन्मुंबई नगर निगम (बीएमसी) के चुनावों के साथ, भाषाई आंदोलन महाराष्ट्र के राजनीतिक विमर्श में केंद्र बिंदु बन गए हैं।

राज्य के बदलते राजनीतिक परिदृश्य में अपनी प्रासंगिकता फिर से हासिल करने के लिए बेताब मनसे और शिवसेना जैसी पार्टियाँ अपने मतदाताओं को एकजुट करने के लिए विभाजनकारी हथकंडे अपनाती दिख रही हैं। हिंदी भाषी कार्यकर्ताओं को निशाना बनाकर, उनका उद्देश्य क्षेत्रीय गौरव को भड़काना और खुद को मराठी मानुष (मराठी लोगों) का रक्षक बताना है।

फिर भी, इस तरह की राजनीति अवसरवाद की बू आती है और उस समावेशी लोकाचार के बिल्कुल विपरीत है जिसने लंबे समय से महाराष्ट्र को परिभाषित किया है। इतालवी दार्शनिक निकोलो मैकियावेली का यह कथन कि "राजनीति का नैतिकता से कोई संबंध नहीं है" विशेष रूप से सटीक प्रतीत होता है। ये राजनीतिक कर्ता-धर्ता लगातार कमजोर प्रवासी मजदूरों को निशाना बनाते हैं, जबकि बॉलीवुड हस्तियों, कॉर्पोरेट दिग्गजों और राजनेताओं जैसे उच्च-प्रोफाइल हस्तियों के बारे में स्पष्ट रूप से चुप रहते हैं, जिन्होंने मराठी भाषा में दक्षता न होने के बावजूद महाराष्ट्र में अपना करियर और दौलत बनाई है। कुछ राजनीतिक समूहों द्वारा प्रचारित भाषाई विशिष्टता का आख्यान महाराष्ट्र की समृद्ध ऐतिहासिक और सांस्कृतिक विरासत के साथ असहजता से जुड़ता है। मराठी गौरव के प्रतीक – छत्रपति शिवाजी महाराज और उनके पुत्र छत्रपति संभाजी महाराज – एक समावेशी भावना के प्रतीक थे जो भाषाई बाधाओं से परे थी। ऐतिहासिक विवरण दर्ज करते हैं कि हिंदी भाषी समुदायों ने 1666 में मुगल हिरासत से शिवाजी के साहसी भागने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी।

हिंदी भाषी क्षेत्र काशी के एक पुजारी ने 1674 में उनका राज्याभिषेक किया और उन्हें छत्रपति की उपाधि प्रदान की। अपनी वीरता के लिए प्रसिद्ध संभाजी हिंदी के विद्वान भी थे, जिन्हें भाषा में तीन महत्वपूर्ण साहित्यिक कृतियों – सातसतक, नखशिखा और नायिकाभेद – की रचना का श्रेय दिया जाता है। ये ऐतिहासिक उदाहरण मराठी और हिंदी भाषी समुदायों के बीच गहरे सांस्कृतिक और भाषाई संबंधों की पुष्टि करते हैं—सह-अस्तित्व की एक ऐसी विरासत जो आज की विभाजनकारी बयानबाजी के बिल्कुल विपरीत है। लोकमान्य तिलक, गोपाल कृष्ण गोखले और काका कालेलकर जैसे प्रमुख स्वतंत्रता-पूर्व महाराष्ट्रीयन नेताओं ने भारत के विविध भाषाई परिदृश्य में हिंदी की एक एकीकृत शक्ति के रूप में क्षमता को पहचाना। उन्होंने हिंदी को एक संपर्क भाषा के रूप में प्रस्तुत किया, जो स्थानीय पहचान को नष्ट किए बिना क्षेत्रीय विभाजन को पाटने में सक्षम हो। कई मराठी कवियों, लेखकों और पत्रकारों ने भी हिंदी साहित्य को समृद्ध किया है, जिससे दोनों भाषाओं के बीच साझा भाषाई विरासत और भी स्पष्ट हो गई है, जो उनकी लगभग 80 प्रतिशत शब्दावली साझा करती है।

भारत की भाषाई विविधता इसकी ताकत और जटिलता दोनों है। 22 आधिकारिक रूप से मान्यता प्राप्त भाषाओं, 10,000 से अधिक लोगों द्वारा बोली जाने वाली 121 भाषाओं और 19,500 से अधिक दर्ज मातृभाषाओं के साथ, विभिन्न क्षेत्रों के बीच संचार एक बड़ी चुनौती बना हुआ है। इस संदर्भ में, हिंदी सामाजिक-आर्थिक एकीकरण और राष्ट्रीय सामंजस्य को सुगम बनाने वाले एक महत्वपूर्ण सेतु के रूप में उभरी है। राजनीति विज्ञानी बलदेव राज नायर ने अपनी मौलिक कृति हिंदी एक संपर्क भाषा में तर्क दिया कि अन्य भारतीय भाषाओं के साथ हिंदी की संरचनात्मक आत्मीयता और इसकी व्यापक सांस्कृतिक पहुँच इसे राष्ट्रीय एकता को बढ़ावा देने के लिए अद्वितीय स्थिति में रखती है। विशिष्ट पहचानों से बंधी क्षेत्रीय भाषाओं के विपरीत, हिंदी संवाद के लिए एक तटस्थ माध्यम के रूप में कार्य करती है, स्थानीय भाषाई जीवंतता को खतरे में डाले बिना संचार का समर्थन करती है। यह अंतर्दृष्टि महाराष्ट्र के लिए विशेष रूप से प्रासंगिक है, जहाँ विविधता ऐतिहासिक रूप से शक्ति का स्रोत रही है, विभाजन का नहीं। महाराष्ट्र के राजनीतिक नेतृत्व को संकीर्णतावाद से ऊपर उठकर समाज को तोड़ने के बजाय उसे जोड़ने का काम करना चाहिए। कानून प्रवर्तन एजेंसियों को उन लोगों के खिलाफ निर्णायक कार्रवाई करनी चाहिए जो ऐसी हिंसा को भड़काते या अंजाम देते हैं। न्यायपालिका का भी संवैधानिक कर्तव्य है कि वह देश में कहीं भी, बिना किसी भेदभाव के, रहने और काम करने के प्रत्येक नागरिक के अधिकार की रक्षा करे। नागरिक समाज - मीडिया, शिक्षा जगत, कलाकार और सामुदायिक नेता - को भाषाई अंधराष्ट्रवाद के आख्यान का विरोध करना चाहिए। शैक्षणिक संस्थान बहुभाषावाद को बढ़ावा दे सकते हैं और देश की भाषाई समृद्धि के प्रति सम्मान को बढ़ावा दे सकते हैं। राजनीतिक दलों को, अपनी ओर से, वास्तविक मुद्दों पर ध्यान केंद्रित करने के पक्ष में, निंदनीय पहचान की राजनीति को त्यागना होगा: बेरोजगारी, बुनियादी ढांचे की कमी, शिक्षा और सामाजिक कल्याण - ये चुनौतियाँ भाषा से परे हैं।

महाराष्ट्र के विकास में हिंदी भाषी प्रवासी श्रमिकों का योगदान निर्विवाद है। मुंबई के क्षितिज के निर्माण से लेकर पुणे के कारखानों को बिजली देने तक, वे राज्य की सफलता के लिए महत्वपूर्ण रहे हैं। उनकी गरिमा और अधिकारों की रक्षा न केवल एक नैतिक अनिवार्यता है, बल्कि निरंतर विकास के लिए एक व्यावहारिक आवश्यकता भी है। भाषाई विभाजन की राजनीति एक खतरनाक रास्ता है - जो महाराष्ट्र के सामाजिक ताने-बाने और विविधता में एकता के व्यापक भारतीय आदर्श, दोनों को खतरे में डालता है। कमजोर समुदायों को निशाना बनाकर, राजनीतिक अवसरवादी महाराष्ट्र के महानतम प्रतीकों की विरासत का अपमान करते हैं और संविधान में निहित मूल्यों के साथ विश्वासघात करते हैं।

जैसे-जैसे भारत वैश्विक मंच पर आगे बढ़ रहा है, उसकी प्रगति सह-अस्तित्व, सम्मान और समावेश के स्तंभों पर टिकी होनी चाहिए। तभी महाराष्ट्र - और वास्तव में राष्ट्र - विकसित भारत की सच्ची भावना को साकार कर सकेगा।

भारत की कूटनीति से टला निमिषा का मृत्यु दंड

जो स्थिति खतरनाक और लगभग निराशाजनक लग रही थी, वह अब एक आशाजनक मोड़ ले चुकी है, जिसका श्रेय भारत के विदेश मंत्रालय के समय पर और प्रभावी हस्तक्षेप और ट्रैक वन और ट्रैक टू, दोनों कूटनीति के शानदार क्रियान्वयन को जाता है।

संतोष मैथ्यू
लेखक, लेखक पांडिचेरी विवि में सह प्रोफेसर हैं।

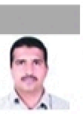

निर्णायक नेतृत्व और कूटनीतिक कुशलता का अद्भुत प्रदर्शन करते हुए, मोदी सरकार ने यमन में गंभीर आरोपों का सामना कर रही भारतीय नर्स निमिषा प्रिया की मृत्युदंड की सजा को सफलतापूर्वक स्थगित करवा लिया है।

हूती-नियंत्रित राजधानी सना में जो स्थिति खतरनाक और लगभग निराशाजनक लग रही थी, वह अब एक आशाजनक मोड़ ले चुकी है, जिसका श्रेय भारत के विदेश मंत्रालय के समय पर और प्रभावी हस्तक्षेप और ट्रैक वन और ट्रैक टू, दोनों कूटनीति के शानदार क्रियान्वयन को जाता है। निमिषा प्रिया के मामले ने भारत और उसके बाहर भी स्तब्ध कर दिया था, अनिश्चितता से भरी न्याय प्रणाली के अधीन और रक्त-धन जैसी पुरातन परंपराओं से प्रभावित होकर एक भारतीय नागरिक यमन के अस्थिर संघर्ष के बीच उलझकर फंस गई।

दांव असाधारण रूप से ऊंचे थे, और कार्रवाई न करने पर गंभीर अन्याय हो सकता था, भले ही दुखद जान न चली जाए। हालांकि, प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के दूरदर्शी नेतृत्व और विदेश मंत्रालय के अथक प्रयासों से, भारत ने दिखाया कि सच्चा वैश्विक नेतृत्व कैसा होता है। सरकार द्वारा राजनयिक माध्यमों का त्वरित उपयोग सुनिश्चित करने से निमिषा की फांसी स्थगित हो गई, जिससे बातचीत को और तेज करने और निष्पक्ष समाधान खोजने के लिए बहुमूल्य समय मिल गया। आधिकारिक राजनयिक माध्यमों (ट्रैक वन) और अनौपचारिक बैकचैनल संपर्कों (ट्रैक टू कूटनीति) के बीच निर्बाध समन्वय ने इस परिणाम में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, जिसने अंतर्राष्ट्रीय संबंधों और संघर्ष समाधान के बारे में भारत की सूक्ष्म समझ को उजागर किया।

प्रमुख क्षेत्रीय खिलाड़ियों, विशेष रूप से एक प्रभावशाली सुन्नी धर्मगुरु और ईरान के विदेश मंत्री, अब्बास अराघची - का हस्तक्षेप, जिन्होंने हूथी अधिकारियों के साथ सक्रिय रूप से बातचीत की, भारत के बहुपक्षीय राजनयिक दृष्टिकोण की सफलता को रेखांकित करता है।

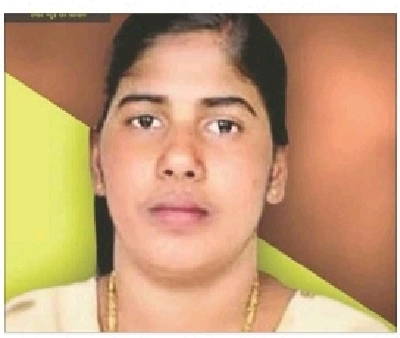

इन प्रयासों ने संकट को एक पूर्ण मानवीय और राजनयिक आपदा में बदलने से रोका। इसने मध्य पूर्वी देशों के साथ भारत के दीर्घकालिक संबंधों की भी पुष्टि की, जिससे वैश्विक मंच पर एक सम्मानित और सक्षम मध्यस्थ के रूप में भारत की स्थिति मजबूत हुई। निमिषा प्रिया के मामले को मोदी सरकार ने जिस तरह से संभाला, उससे एक कड़ा संदेश गया है: विदेशों में भारतीय नागरिकों की सुरक्षा और सम्मान सर्वोपरि प्राथमिकताएँ हैं। यह मामला भारत की प्रतिष्ठा को एक ऐसे राष्ट्र के रूप में और भी मजबूत करता है जो न केवल मानवाधिकारों का समर्थक है, बल्कि सॉफ्ट-पावर डिप्लोमेसी की कला में भी निपुण है, जो दुनिया भर में चुनौतीपूर्ण परिस्थितियों में सांस्कृतिक राजदूत के रूप में काम करने वाले अपने नागरिकों की सुरक्षा के माध्यम से प्रदर्शित होती है। कांतापुरम के समय पर और विवेकपूर्ण हस्तक्षेप, साथ ही विदेश मंत्रालय की मजबूत कूटनीतिक पहुँच, जटिल अंतरराष्ट्रीय बाधाओं को पार करने में दृढ़ता और रणनीतिक संवाद की शक्ति का उदाहरण है।

आधिकारिक सरकारी प्रयासों और समुदाय-नेतृत्व वाली कूटनीति के संयोजन ने विदेशों में भारतीय नागरिकों की सुरक्षा में एक नया मानदंड स्थापित किया है। यह सफल प्रकरण भारत के कूटनीतिक इतिहास में एक निर्णायक क्षण है, जो न्याय, शांति और प्रवासी भारतीयों की सुरक्षा के प्रति मोदी सरकार की प्रतिबद्धता पर प्रकाश डालता है। निमिषा प्रिया की जान केवल कानूनी अपीलों से ही नहीं, बल्कि भारत के अटूट संकल्प और वैश्विक प्रतिष्ठा के कारण बची - यह इस बात का प्रमाण है कि आज भारतीय कूटनीति दयालु और साहसी दोनों है।

निमिषा प्रिया के अंतिम समाधान की प्रतीक्षा करते हुए, उनके मामले को मोदी प्रशासन के तहत भारत के बढ़ते प्रभाव और उसकी कूटनीतिक मशीनरी की प्रभावशीलता के प्रमाण के रूप में याद किया जाएगा। यह केवल एक नागरिक की नहीं, बल्कि हर भारतीय की सुरक्षा के राष्ट्र के सिद्धांत की जीत है, चाहे वे कहीं भी हों। यह कूटनीति ही है जो कारगर है - एक नए युग की शुरुआत करते हुए जिसमें भारत विश्व मंच पर पूरे मन, रणनीति और शक्ति के साथ नेतृत्व कर रहा है। एक ऐसी दुनिया में जहां अक्सर उदासीनता का भाव होता है, अपने नागरिकों के प्रति भारत की दृढ़ प्रतिबद्धता स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। निमिषा प्रिया का बचाव भारत की नैतिक दिशा की पुष्टि है।

सरकार का हस्तक्षेप न केवल शक्ति, बल्कि शासन-कौशल में संवेदनशीलता को भी दर्शाता है। जैसे-जैसे वैश्विक चुनौतियां और जटिल होती जा रही हैं, यह मामला संवेदनशील और मानवीय कूटनीति की एक मिसाल कायम करता है। यह सिद्ध करता है कि जब नेतृत्व साहसी और करुणामय दोनों प्रकार का हो, तो कोई भी भारतीय कभी भी सचमुच अकेला नहीं होता।

आप की बात

दु:खद घटना

राजस्थान के झालावाड़ जिले के मनोहरथाना ब्लाक के पिपलोदी गांव के सरकारी स्कूल की छत गिरने से 6 बच्चों की दबने से मृत्यु हो गई व 29 से अधिक बच्चे घायल हो गए, इनमें कुछ बच्चे गंभीर अवस्था में है। राजस्थान में इस वर्ष भारी बारिश हो रही है। चंद दिनों पहले भी एक सरकारी स्कूल की छत गिर गई थी, लेकिन छुट्टी का दिन होने से कोई हताहत नहीं हुआ। यह घटना बहुत ही दुखद है। अपने माता-पिता की आंखों के तारे, ये मासूम बच्चे बड़ी आशा व उम्मीद की किरण जगाकर, भविष्य का सपना सजाए हुए, पढ़ने आए थे, वह इस आकस्मिक घटना के बाद अपने सपनों को छोड़कर चले गए। हालांकि बारिश के पहले शिक्षा विभाग सभी को सतर्क और सावधान करते हुए आदेश देता है कि जो भवन जर्जर, जीर्ण-शीर्ण तथा दीवारें कमजोर हो तो विभाग को सूचित करते हुए, सुरक्षित स्थान पर शाला संचालित की जाए। आखिरकार यह पोल पट्टी व लापरवाही/चुक किसकी रही, यह कहा नहीं जा सकता। जांच पड़ताल के बाद ही पता चल सकता है। लेकिन जिस तरह से छत गिरी व हादसा हुआ उसको देखकर लगता है कि उस भवन की छत जर्जर व जीर्ण-शीर्ण होने के साथ गिरने लायक थी। देश प्रदेश में ऐसे कई स्कूल व भवन हो सकते हैं, जो सही सलामत ना हो। इसके लिए विभाग, इंजीनियरों को आदेशित करें।

- **हेमा हरि उपाध्याय**, उज्जैन

खतरे की घंटी

विश्व बैंक की हालिया रिपोर्ट भारत के लिए खतरे की घंटी है। रिपोर्ट के अनुसार, जलवायु परिवर्तन के कारण भारत के शहरी क्षेत्रों में अनियमित वर्षा, गर्मी की लहरों और समुद्र के बढ़ते जल स्तर जैसी चरम मौसमी घटनाएं तेजी से बढ़ेंगी। भारत में 2020 में जहां शहरी जनसंख्या 48 करोड़ थी, वहीं 2050 तक यह संख्या लगभग दोगुनी होकर 95.1 करोड़ हो जाएगी। वर्तमान में भारत को शहरी बाढ़ से हर वर्ष 4 अरब डॉलर का नुकसान होता है। यदि अभी से सुधारात्मक कदम नहीं उठाए गए तो यह नुकसान 2070 तक 30 अरब डॉलर तक पहुंच सकता है। इसलिए यह स्पष्ट है कि अब समय बर्बाद करने की नहीं, बल्कि ठोस योजना और तुरंत कार्यवाही की है। इस संकट से निपटने के लिए भारत को सबसे पहले तेजी से बढ़ती आबादी और गांव से शहरों की ओर हो रहे पलायन को नियंत्रित करना होगा। जब तक ग्रामीण क्षेत्रों में पर्याप्त रोजगार, शिक्षा, स्वास्थ्य, पेयजल, बिजली, इंटरनेट और अन्य बुनियादी सुविधाएं नहीं होंगी, तब तक शहरों की ओर जनसंख्या का दबाव लगातार बढ़ता रहेगा। इसके लिए गांवों में स्थानीय स्तर पर लघु और मध्यम उद्योगों को बढ़ावा देना होगा। कृषि से जुड़े उद्यम, हस्तशिल्प, खाद्य प्रसंस्करण, डेयरी और पर्यटन जैसे क्षेत्रों में युवाओं के लिए प्रशिक्षण और वित्तीय सहायता उपलब्ध करानी होगी। दूसरे, ग्रामीण परिवहन और संपर्क को मजबूत करना आवश्यक है।

- **सुभाष बुड़ावनवाला**, रतलाम

अनावश्यक विवाद

ऐसा प्रतीत होता है कि देश के विपक्षी दलों को देश की संवैधानिक संस्थाओं व चुनाव व्यवस्था पर तनिक भी विश्वास नहीं है। यदि विश्वास होता तो वे मतदाता सूची के गहन पुनरीक्षण के विरुद्ध अनर्गल और अतार्किक बयानबाजी न करते। विधान सभाओं से लेकर संसद तक मतदाता सूची के परीक्षण पर बवाल न मचाते। आजकल विपक्ष के सम्मुख एक बड़ी चुनौती अपना अस्तित्व बचाने की है। बिहार में मतदाता सूची के पुनरीक्षण पर प्रश्न चिन्ह खड़ा करने वालों को देश के मुख्य निर्वाचन आयुक्त श्री ज्ञानेश कुमार ने करारा जवाब दिया है तथा पूछा है कि पारदर्शी प्रक्रिया से तैयार की जा रही मतदाता सूची क्या मजबूत चुनाव और मजबूत लोकतंत्र की नींव नहीं है ? क्या जिन लोगों की मौत हो चुकी है, उन्हें वोट डालने दी जाए ? क्या अपात्र लोगों को मताधिकार मिलना चाहिए ? कड़वा सच यही है, कि जब जब लोकतांत्रिक व्यवस्था में सुधार के प्रयास किए जाते हैं, तब तब विपक्षी राजनीतिक दल सुधारों का विरोध करने के लिए सड़क से लेकर संसद तक विरोध पर उतर आते हैं तथा व्यवस्था के सकारात्मक सुधार को स्वीकार नहीं कर पाते। कौन नहीं जानता कि अव्यवस्था का समर्थन वही करते हैं, जिन्हें प्रचलित अव्यवस्था से कोई लाभ प्राप्त हो रहा हो।

- **सुधाकर आशावादी**, मेरठ

भारत की महत्ता

मालदीव के 60वें स्वतंत्रता दिवस पर भारत का प्रमुख अतिथि के रूप में आमंत्रित होना न केवल भारत की क्षेत्रीय महत्ता को रेखांकित करता है, बल्कि यह भी दर्शाता है कि कठिन समय में पड़ोसी देशों की मदद करना भारत की विदेश नीति का मूल भाव है। मालदीव की हालिया आर्थिक बदहाली में भारत ही वह देश था जिसने उसे 600 करोड़ रुपये की विकास सहायता दी और आपातकालीन सहायता पहुंचाई। यह वह वक्त था जब चीन, जिससे राष्ट्रपति मुइज्जू की निकटता जगजाहिर है, सहायता देने से पीछे हट गया। मालदीव जैसे छोटे देशों की समस्याएं चीन के कर्ज-जाल में फंसने से और गंभीर हुई हैं। भारत ने यह समझा और समय पर मदद कर यह सिद्ध किया कि वह महज रणनीतिक साझेदार नहीं, बल्कि संकटमोचक मित्र भी है। हालांकि भारत को यह भी समझना होगा कि उसके पड़ोसी देशों में घरेलू राजनीतिक समीकरणों और संतुलनकारी विदेश नीति के चलते चीन जैसे देशों की ओर झुकाव बना रहता है। भारत के लिए इन परिस्थितियों को बदल पाना कठिन है, लेकिन उनका प्रभाव कम जरूर किया जा सकता है। भारत को कठोर प्रतिक्रिया देने के बजाय संवाद और सहयोग के माध्यम से रिश्ते मजबूत करने होंगे। भारत को यह प्रयास करना होगा कि वह अपने पड़ोसियों को चीन की तुलना में कहीं अधिक भरोसेमंद, संवेदनशील और साझेदारीपूर्ण विकल्प प्रदान करे।

- **विभुक्ति बुधवया**, खाचरोद

CCI NG 3.7 Product: NBTDelhiBS PubDate: 26-07-2025 Zone: Mahanagar Edition: 1 Page: NBTMAH12 User: atul.srivastava Time: 07-25-2025 22:34 Color:

विचार

नवभारत टाइम्स

नवभारत टाइम्स । नई दिल्ली । शनिवार, 26 जुलाई 2025

इसमें US का घाटा

टेक इंडस्ट्री को डॉनल्ड ट्रंप की चेतावनी

अमेरिकी राष्ट्रपति डॉनल्ड ट्रंप का 'मेक अमेरिका ग्रेट अगेन' (MAGA) अभियान प्रवासी विरोधी बनता जा रहा है। US की टेक कंपनियों को उनकी ताजा चेतावनी इसी का प्रमाण है। हालांकि ट्रंप की ऐसी हर कोशिश उनके ही देश को नुकसान पहुंचाएगी।

फिर निशाने पर भारत । अपने दूसरे कार्यकाल की शुरुआत ही धमकियों से करने वाले ट्रंप चाहते हैं कि अमेरिकी कंपनियां केवल अमेरिकियों को ही नौकरी दें। एक AI समिट में उन्होंने कहा, 'हमारी कई बड़ी टेक कंपनियों ने अमेरिकी आजादी का फायदा उठाते हुए चीन में फैक्ट्रियां बनाईं, भारत में कर्मचारियों को नौकरी दी और आयरलैंड में मुनाफा बचाया...।' कुछ अरसा पहले ही ट्रंप ने एपल को चेतावनी दी थी कि अगर उसने भारत में प्रॉडक्शन किया, तो आईफोन पर 25% टैरिफ लगा दिया जाएगा।

भारतीयों का दबदबा

काबिलियत को जगह । ट्रंप चाहते हैं कि अमेरिका में बिकने वाला हर सामान अमेरिका में ही बने और उसे बनाएं भी अमेरिकी ही, लेकिन क्या यह संभव है? अमेरिकी कंपनियां इसलिए भारत या चीन में प्लांट लगाना चाहती हैं, क्योंकि यहां मैन्युफैक्चरिंग सस्ती है। इसी तरह, सिलिकॉन वैली या दूसरी अमेरिकन इंडस्ट्रीज में भारतीयों ने अपनी काबिलियत के दम पर जगह बनाई है।

इकॉनमी के इंजन । पिछले साल की एक रिसर्च के मुताबिक, सिलिकॉन वैली के करीब एक तिहाई टेक एम्प्लॉई भारतीय मूल के हैं। फॉर्च्युन 500 की लगभग डेढ़ दर्जन कंपनियों में टॉप पोजिशन पर भारतीय बैठे हैं। ये भारतीय अमेरिकी इकॉनमी के इंजन हैं।

विकास में योगदान । अमेरिकी की टेक इंडस्ट्री या सिलिकॉन वैली आज अगर वैश्विक स्तर पर राज कर रही है, तो इसमें प्रवासियों का बड़ा योगदान है। दुनियाभर की मेधा, खासकर भारत की, ने मिलकर इस इंडस्ट्री को सींचा है। इलॉन मस्क की टेस्ला को जब ऑटोपायलट सॉफ्टवेयर में सफलता मिली, तो उन्होंने भारतीय मूल के एक रोबोटिक्स इंजीनियर अशोक एल्लुस्वामी का ही नाम पहले लिया था।

कहां से लाएंगे लोग । ट्रंप उस वैश्वीकरण को खत्म करने की बात कर रहे हैं, जिससे सबसे ज्यादा फायदा अमेरिका को ही हुआ है। उनके पास इंडस्ट्री की मांग को पूरा करने लायक वर्कफोर्स नहीं है। भारत के बिना उनका MAGA पूरा नहीं हो सकता।

दो दूनी चार

हाथ फैलाने से पहले

रमेश तिवारी

दोस्तों और रिश्तेदारों से उधार लेना एक पुरानी परंपरा रही है। ये आपसी विश्वास और सामाजिक एकजुटता की नींव पर टिका रहा है। यह केवल आर्थिक लेन-देन की व्यवस्था नहीं रही, बल्कि रिश्तों को मजबूत करने का एक माध्यम थी। समय के साथ सामाजिक बदलावों और डिजिटल क्रांति के कारण ये इंतजाम अब दुर्लभ होता जा रहा है।

पहले के दौर में, लोग आर्थिक संकट में अपने करीबियों की ओर ही रुख करते थे। शादी-विवाह, बीमारी या खेती जैसे बड़े खर्चों के लिए दोस्तों और रिश्तेदारों से उधार लेना आम था। यह कर्ज बिना ब्याज और लिखित अनुबंध के, केवल विश्वास पर आधारित होता था।

अब कर्ज सिर्फ इमरजेंसी में नहीं लिए जाते। उपभोक्तावादी संस्कृति और बढ़ते खर्चों ने भी गैर-जरूरी कर्ज लेने की प्रवृत्ति को बढ़ाया है। आधुनिक जमाने में डिजिटल लेनदेन और वित्तीय संस्थानों की पहुंच ने कर्ज का चेहरा बदल दिया है। लोग अब बैंक लोन, क्रेडिट कार्ड और ऑनलाइन लेंडिंग प्लेटफॉर्म्स की ओर रुख करते हैं। प्राइवेसी की बढ़ती भावना ने उधार मांगने को संकोच का विषय बना दिया है। सोशल मीडिया पर लोग अपनी आर्थिक स्थिति को लेकर अधिक सतर्क हो गए हैं। वे अपनी आर्थिक कमजोरियों को उजागर करने से बचते हैं। यह तर्क भी दिया जाता है कि लेनदेन अनौपचारिक हुआ तो विवाद तय समझो।

उधार लेना केवल आर्थिक नहीं, बल्कि मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया भी है। अपने करीबियों से कर्ज लेने वाला अपराधबोध और दबाव महसूस करता है। शर्मिंदगी या असहायता महसूस करता है। सामाजिक स्तर पर बार-बार कर्ज लेने से व्यक्ति की प्रतिष्ठा को ठेस पहुंच सकती है। दूसरी तरफ देने वाला श्रेष्ठता का भाव रख सकता है। हालांकि वो भी पैसा वापस न मिलने या रिश्ते खराब होने की चिंता में रहता है। सामाजिक दबाव के कारण कई लोग अपनी क्षमता से अधिक कर्ज दे देते हैं, जिससे खुद उनकी वित्तीय स्थिति डगमगा जाती है। कर्ज देने वाले और लेने वाले एक दूसरे की प्राइवेसी में दखल देने लगते हैं। छोटी-छोटी बातों से शुरू होने वाले झगड़े अक्सर अदालतों तक पहुंच जाते हैं, जहां संबंधों की दुहाई कोई मायने नहीं रखती। बैंक या फाइनेंस कंपनियों से लोन लेना हर किसी के लिए संभव नहीं होता।

दोस्तों और रिश्तेदारों के बीच कर्ज की परंपरा टिकी रहे, इसके लिए कुछ कदम जरूरी हैं। इसमें पारदर्शिता जरूरी है। कर्ज की राशि, समय-सीमा और शर्तें स्पष्ट हों, चाहे मौखिक ही क्यों न हों। कर्ज देने वाला भी अपनी आर्थिक क्षमता का आकलन कर ले और उसी के अनुसार कर्ज दे। छोटे लेन-देन ही इसके दायरे में हों। बड़ी रकम के लिए बैंकों या माइक्रोफाइनेंस का उपयोग किया जाए। हमें यह भी स्वीकार करना होगा कि हर रिश्ता हर तरह के बोझ को सहने के लिए नहीं बना होता, और कुछ संबंधों को वित्तीय लेनदेन के जटिल जाल से मुक्त रखना ही बेहतर है। पैसा महत्वपूर्ण है, लेकिन रिश्ते अमूल्य हैं।

ऑफ़ दि ट्रैक

AI से कैंसर का इलाज

दिलीप लाल

कैंसर के इलाज में आर्टिफिशल इंटेलिजेंस नई उम्मीद बनकर उभर रहा है। डेनमार्क की टेक्निकल यूनिवर्सिटी के वैज्ञानिकों ने AI की मदद से ऐसा प्रोटीन बनाया है, जो कैंसर को खत्म करने में मददगार हो सकता है। वैज्ञानिकों ने इस तकनीक को नाम दिया है 'मॉलिक्यूलर GPS'। यह तकनीक ठीक वैसे ही काम करती है, जैसे गूगल मैप्स हमें रास्ता दिखाता है। इसमें एक AI मॉडल 'RFdiffusion' की मदद से बहुत छोटे-छोटे प्रोटीन बनाए जाते हैं। ये प्रोटीन कैंसर कोशिकाओं की पहचान करने में T-Cells की मदद करते हैं। इससे रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है और कैंसर कोशिकाएं खत्म होती हैं। शुरुआती प्रयोगों में हजारों प्रोटीन डिजाइनों में से 44 को चुना गया। इनमें से एक डिजाइन सबसे अच्छा साबित हुआ। जब इसे इंसान की T-Cells पर इस्तेमाल किया गया, तो उसने त्वचा के कैंसर (मेलानोमा) की कोशिकाओं को बहुत तेजी से नष्ट कर दिया। फिलहाल यह तकनीक शुरुआती दौर में है, और इंसानों पर इस्तेमाल से पहले और परीक्षण किए जाएंगे। वैज्ञानिक मान रहे हैं कि अगर सब कुछ ठीक रहा, तो यह तकनीक सिर्फ कैंसर ही नहीं, बल्कि कई दूसरी गंभीर बीमारियों के इलाज में भी बहुत मददगार हो सकती है।

प्रसिद्ध शिकारी ने संकरी खाई में किया था बाघिन का शिकार

अंडों ने बचाई कॉर्बेट की जान

उत्तराखंड के नैनीताल में 25 जुलाई 1875 को पैदा हुए जिम कॉर्बेट भारत के सबसे प्रसिद्ध शिकारी रहे हैं। कुमाऊं इलाके में उन्होंने कई नरभक्षी बाघों का आतंक खत्म किया। 1925 में उनका मुकाबला हुआ चौगढ़ की बाघिन से, जो 64 लोगों की जान ले चुकी थी। उस बाघिन के शिकार की रोमांचक कथा उन्हीं के शब्दों में :

करीब 100 गज चले होंगे कि उतराई आ गई। मैंने उतरना शुरू ही किया कि एक नाइटजार चिड़िया एक चट्टान से फड़फड़ाकर उड़ी। जहां से वह उड़ी, वहां दो अंडे दिखे। धूसर रंग के अंडों पर गहरे भूरे निशान थे। मेरे कलेक्शन में नाइटजार के अंडे नहीं थे। मेरा मन ललचा गया। लेकिन मेरे पास अभी उन्हें रखने लायक कोई चीज नहीं थी, तो मैंने उन्हें बाईं हथेली में संभाल लिया।

बाघिन की आवाज

लगभग 60 गज चलने के बाद हम तीन लोग अब 12 से 14 फुट की गहराई में थे। बारिशों में इन पहाड़ी खाइयों से पानी गुजरता। उनकी सोहबत ने चट्टानों को शीशे की तरह चिकना कर दिया था। इन पर पांव जमाना मुश्किल हो रहा था, तो मैंने राइफल अपने साथियों को दे दी। मैंने सोचा कि नीचे फिसलकर उतरूंगा। अभी मैं चट्टान पर फिसला ही था कि दोनों आदमी उछलकर मेरे पास आ गए और राइफल मुझे पकड़ा दी। वे घबराए हुए थे। उन्होंने पूछा, 'क्या मैंने बाघिन की आवाज सुनी?' मुझे तो कुछ सुनाई दिया नहीं था। उन्होंने बताया कि बहुत करीब से गुर्राने की आवाज आई, लेकिन अंदाजा नहीं लगा कि किस ओर से।

बाघ अगर डिनर की ताक में हों तो कोई आवाज नहीं करते। मैं बस इतना ही कह सकता हूं कि मैदान से जब हम नीचे उतरे तो बाघिन हमारे पीछे लग गई होगी और हमें खड्ड में उतरते देख उसने आगे बढ़कर वहां पोजिशन ले ली होगी, जहां खाई की चौड़ाई आधी रह गई थी। और उसने जब छलांग मारने की सोची होगी, तभी मैं फिसलकर उसकी नजरों से ओझल हो गया होऊंगा। निराश बाघिन अनजाने में गुर्रा पड़ी होगी। अब हम तीनों जहां पर थे, वहां पीछे की ओर खड़ी चट्टान थी। दाईं ओर भी चट्टानी दीवार थी। बाईं ओर ऊबड़-खाबड़ चट्टानों का 30-40 फुट ऊंचा किनारा था। खाई की जिस बलुई तलहटी में हम थे, वह लगभग 40 फुट लंबी और 10 फुट चौड़ी रही होगी। उसके निचले सिरे पर आगे चीड़ का एक बड़ा पेड़ गिरा था, जिससे खाई में पुल जैसा बन गया था। उससे लगभग 15 फुट आगे बढ़ने पर चट्टानी दीवार का आखिरी सिरा आ गया। बलुई तलहटी इस चट्टानी दीवार के दूसरी ओर पीछे की ओर मुड़ी थी। मैंने वहीं से दाएं कंधे की ओर से पीछे की ओर देखा। और तब मेरी नजर सीधे टकराई बाघिन की आंखों से।

जिम कॉर्बेट 150 जयंती पर विशेष

उस ठहरे हुए लम्हे में भूगोल कुछ इस तरह था कि तीन ओर से चट्टानों की कुदरती दीवारें थीं। और इनसे घिरी तलहटी थी करीब 20 फुट लंबी और 10 फुट चौड़ी। और उस पर मौजूद थी वह बाघिन, मुझसे बमुश्किल आठ फुट दूर। उसने अगले पंजे आगे की ओर बढ़ा लिए थे। पिछले उसने मोड़ रखे थे। सिर पंजों से कुछ ऊपर था। राइफल मेरे दाएं हाथ में थी। सीने से सटी राइफल की नाल मेरी बाईं ओर थी। सेफ्टी कैच हटा हुआ था।

मैंने राइफल को धीरे-धीरे बाघिन की ओर घुमाना शुरू किया। मेरी नजर बाघिन की आंखों पर जमी थी और उसकी मुझ पर। जैसे ही राइफल सीध में आई, मैंने ट्रिगर दबा दिया। बाघिन कुछ देर तक अविचलित रही और फिर बहुत धीरे से उसका सिर उसके अगले पंजों पर लुढ़क गया। गोली उसकी रीढ़ से जाकर दिल के ऊपरी हिस्से में लगी थी। उसके पंजों और नाखूनों को करीब से देखने के पहले ही मैं जान गया था कि वह चौगढ़ बाघिन थी। उसने 64 लोगों की जान ली थी। मेरे पीछे आ रहे दोनों लोगों ने जब मुझे रुकते और सिर घुमाते देखा तो वे कुछ गज पीछे ही ठिठक गए। उन्हें लग गया था कि मैंने बाघिन को देख लिया है। उनमें से एक ने बाद में मुझे बताया कि वह मुझसे कहने ही वाला था कि मैं अंडे गिरा दूं और दोनों हाथों में राइफल ले लूं। लेकिन वे अंडे मेरे बहुत काम आए। अगर वे न होते तो मेरे दोनों हाथों में राइफल होती। बाघिन दिखने पर पूरा चांस था कि मैंने राइफल उस पर तान दी होती। राइफल तेजी से घूमने पर वह छलांग लगा देती। मेरे बहुत हल्की हरकत करने से ही वह रुकी हुई थी।

अंडे वापस रखे

बाघिन के ढेर होने के बाद हम लौटे। मैं उस चट्टान के पास गया। वहां अंडों को कुछ गहराई में ठीक उसी जगह पर रखा, जो उनके लिए घोंसला था। पूरे समय मेरे हाथ में रहने के कारण उनमें गरमाहट बनी हुई थी। आधे घंटे बाद जब मैं वहां से दोबारा गुजरा तो उनकी मां वहां आ चुकी थी। उसने पंखों में उन्हें छिपा रखा था।

Hulkamania

उनका असली नाम था **Terry Gene Bollea**, लेकिन उनकी मस्कुलर बॉडी देखकर फैंस बोले, 'यह तो हल्क से भी ताकतवर है।' इसी डील-डौल ने उन्हें बना दिया **WWE** का हल्क होगन, जिसने 5 दशकों तक रिंग पर राज किया।

5 पॉइंट

1 पहले सुपरस्टार
11 अगस्त 1953 को US के जॉर्जिया में पैदा हुए Hulk Hogan ने 1972 में रेसलिंग शुरू की। 'हॉलिवुड होगन' और 'द सुपर डिस्ट्रॉयर' जैसे कई रिंग नेम पाए। वह WWE, जो तब WWF था, के पहले सुपरस्टार थे।

2 WrestleMania को बदला
प्रफेशनल रेसलिंग का सबसे बड़ा शो WrestleMania है, जो पहली बार 1985 में हुआ था और इसके मेन इवेंट में होगन थे। इसके तीसरे एडिशन में उन्होंने 'आंद्रे द जॉइंट' को बॉडीस्लैम किया, जो आइकॉनिक माना

3 दुनिया में नाम
हल्क होगन ने न्यू जापान प्रो-रेसलिंग, अमेरिकन रेसलिंग और WCW में भी फाइट की। उनके यूनिक लुक - स्टाइलिश मूंछें, सिर पर बंधे स्कार्फ और टी-शर्ट फाड़ने के अंदाज ने पूरी दुनिया में मशहूर कर दिया।

4 हॉल ऑफ फेम
यानी प्रफेशनल रेसलर्स का लाइफ टाइम अचीवमेंट अवॉर्ड। हल्क इसमें दो बार शामिल हुए - 2005 और 2018। अलग-अलग वक्त पर उनकी WWE में 5 बार वापसी हुई। हर दौर के रेसलर्स से वह लड़े।

5 एक्टिंग करियर
Rocky III, No Holds Barred, Suburban Commando, Mr. Nanny जैसी फिल्मों में काम किया। रियलिटी शो 'Hogan Knows Best' लोकप्रिय हुआ। डॉनल्ड ट्रंप को सपोर्ट किया

प्रस्तुति: शैलेंद्र पांडेय

SIR पारदर्शी नहीं है, न ही यह निष्पक्ष है...

बिहार में चुनाव आयोग के SIR पर सड़क से लेकर संसद तक ढेरों सवाल उठ रहे हैं। इन सवालों से जुड़े अहम पहलुओं पर असोसिएशन फॉर डेमोक्रेटिक रिफॉर्म (ADR) के संस्थापक सदस्य जगदीप एस. छोकर से NBT की मंजरी चतुर्वेदी ने बात की। पेश हैं बातचीत के प्रमुख अंश :

NBT सप्ताह का इंटरव्यू

जगदीप एस. छोकर

■ बिहार में चुनाव आयोग के SIR अभियान को आप कैसे देखते हैं?

अपने 24 जून के नोटिफिकेशन में चुनाव आयोग ने तीन-चार दलीलें दी हैं। उनमें कोई नई दलील नहीं है। कहना उनका यही है कि बहुत से लोग मर गए हैं, बहुत से दूसरे राज्यों में चले गए हैं, और बहुत से विदेशी नागरिक फर्जीवाड़े से मतदाता सूची में आ गए हैं। ये बातें 23 जून को तो हुई नहीं थीं। यह किस्सा तो पिछले 15-20 सालों से चल रहा है। इसके बारे में यह कहना कि इसकी इंटेंसिटी इतनी ज्यादा हो गई है कि अगले कुछ दिन में बिल्कुल नए सिरे से इलेक्टोरल रोल बनेगा, तभी काम चलेगा, वरना लोकतंत्र खतरे में पड़ जाएगा - यह बात समझ में नहीं आती। दरअसल, जनवरी 2025 में जब आयोग ने समरी रिविजन किया था, उसी वक्त यह काम कर लेना चाहिए था। जनवरी से जुलाई-अगस्त तक 7-8 महीने का समय तो मिलता। तो इसकी टाइमिंग एक बड़ा मुद्दा है। सुप्रीम कोर्ट में जस्टिस बागची ने 10 जुलाई की सुनवाई में चुनाव आयोग के वकील को सलाह दी थी आप SIR की कार्रवाई को बिहार विधानसभा के चुनाव से डीलिंक कर दीजिए। चुनाव जनवरी के समरी इलेक्टोरल रोल के आधार पर करवाइए और SIR बाद में करते रहिए। लेकिन आयोग नहीं माना। फिर इसे करने के लिए कितना टाइम दिया गया है, यह दूसरा मुद्दा है। वहीं, इस काम के तरीके में भी कुछ चीजें हैं जो समझ में नहीं आती हैं। जब चीजें समझ में नहीं आतीं, तो शक होता है।

■ SIR पर ADR की मुख्य आपत्ति क्या है?

इसमें दो बड़ी चीजें हैं। एक- कानूनी दिक्कतें, दूसर प्रक्रिया संबंधी दिक्कतें। 24 जून के नोटिफिकेशन में लिखा है कि जो लोग 1 जनवरी, 2003 से पहले मतदाता सूची में थे, उन्हें भारत का नागरिक माना जाएगा। यानी इसके बाद के लोग नागरिक नहीं माने जाएंगे! नागरिक ना मानना बहुत बड़ी बात है। सुप्रीम कोर्ट ने 10 जुलाई की सुनवाई में कहा भी था कि आप नागरिकता वाली बात पर मत जाइए, इस पर जाने का कोई फायदा नहीं है। इसके अलावा कानून है कि जिस व्यक्ति का नाम चुनाव सूची से हटाने की वजह मिले, चुनाव आयोग को उसे कारण बताओ नोटिस देना होता है। फिर संबंधित व्यक्ति चुनाव आयोग के दफ्तर जाएगा। यहां ओनरशिप प्रूफ आप पर शिफ्ट कर दिया गया है कि कागज दिखाकर साबित करें कि आप भारत के नागरिक हैं। यह जिम्मेदारी पहले चुनाव आयोग की होती थी कि वह घर-घर जाकर लोगों को रजिस्टर करे। अब उल्टा हो गया है।

■ SIR की प्रक्रिया में अपात्र मतदाताओं की पहचान के लिए जो विधि अपनाई गई है, उस पर आप क्या कहेंगे? क्या उसे पारदर्शी और निष्पक्ष कहा जा सकता है?

न तो पारदर्शी है और न निष्पक्ष है। जब 26 जुलाई से 31 जुलाई तक फॉर्म की जांच होगी, तब फैसला किया जाएगा कि कौन वोटर लिस्ट में होगा, कौन नहीं होगा। सुप्रीम कोर्ट में उन्होंने अपने एफिडेविट में कहा है कि जिसका भी फॉर्म आएगा, वे सब ड्राफ्ट इलेक्टोरल रोल में होंगे। 5 जुलाई को बिहार के चीफ इलेक्टोरल ऑफिसर ने एक पन्ने का विज्ञापन दिया था। उस विज्ञापन के सबसे नीचे छोटे-छोटे अक्षरों में चार लाइनें थीं। आखिरी लाइन में लिखा था कि अगर आपके फॉर्म के साथ कोई डॉक्युमेंट नहीं होगा तो अवेलेबल इंफॉर्मेशन के आधार पर फैसला किया जाएगा। यह फैसला ERO या रिटर्निंग ऑफिसर करेंगे, उसके बाद उसकी अपील होगी। ERO के फैसले की अपील होगी रिटर्निंग ऑफिसर को और रिटर्निंग ऑफिसर की अपील होगी चीफ इलेक्टोरल ऑफिसर को। फिर तो बात ही खत्म हो गई।

> **24 जून के नोटिफिकेशन में लिखा है कि जो लोग 1 जनवरी, 2003 से पहले मतदाता सूची में थे, उन्हें भारत का नागरिक माना जाएगा। यानी इसके बाद के लोग नागरिक नहीं माने जाएंगे। नागरिक ना मानना बहुत बड़ी बात है। सुप्रीम कोर्ट ने 10 जुलाई की सुनवाई में कहा भी था कि आप नागरिकता वाली बात पर मत जाइए**

■ आरोप लगाया जा रहा है कि SIR से वंचित वर्गों, जैसे दलित और मुस्लिम के वोटिंग राइट्स पर असर पड़ेगा...

बिल्कुल पड़ेगा। पलायन किए हुए लोग ज्यादातर दो तरह के हैं। एक तो पंजाब-हरियाणा में खेतों में काम करते हैं, जहां पूरा का पूरा परिवार चला जाता है। दूसरे, बहुत लोग बड़े शहरों में मजदूरी करते हैं। उन लोगों के यह फॉर्म भरने और जमा करने का सवाल ही नहीं पैदा होता। उनके नाम ड्राफ्ट इलेक्टोरल रोल में नहीं होंगे। वे चुनाव से एक दिन पहले अपने गांव आएंगे। फिर चुनाव वाले दिन क्या होगा, सोचिए।

■ BLO की जो भूमिका है और उसकी पूरी कार्यप्रणाली है, उस पर आप क्या कहना चाहेंगे?

BLO का बुरा हाल है। उनको जो काम दिया गया है वह असंभव है। इलेक्शन कमिशन ने कहा कि 1 लाख BLO हैं, पर हैं उससे कम। इसके अलावा राजनीतिक दलों ने बूथ लेवल एजेंट (BLA) लगाए हैं। BLA एक दिन में 50 एनरोल व एडमिशन फॉर्म भरवाकर जमा कर सकता है। अब जिस राजनीतिक दल के ज्यादा BLA हैं, वे ज्यादा फॉर्म जमा करेंगे। इसमें कितनी गड़बड़ होगी ये सोचिए। दूसरे, आयोग ने यह कहा कि 4 लाख वॉलंटियर थे। वे कौन थे, उनका किस पार्टी के प्रति क्या झुकाव है, मुझे नहीं मालूम। चुनाव आयोग के काम में सबसे महत्वपूर्ण बात होती है निष्पक्षता। BLA और वॉलंटियर की निष्पक्षता पर मेरे ख्याल में बहुत बड़ा सवाल है।

www.nbt.in

कला कहने की और सुनने की

मुझे अब मुंबई में रहते कुछ समय हो गया है। बचपन से सुनती आई थी कि सारे महानगर एक जैसे होते हैं। लेकिन एक बात जो मैंने नहीं सोची थी- वह थी भाषा। भाषा का काम हमेशा एक ही रहा है - आपकी बात मुझ तक पहुंचाना और मेरी, आप तक। मुझे पता था कि मुंबई आई हूं तो मराठी सीखनी पड़ेगी। मगर पिछले कुछ हफ्तों में मैं खुद से यह सवाल करने लगी हूं- क्या मैं मराठी इसलिए सीखना चाहती हूं ताकि मुझे मुंबई में बेहतर जीवन जीने में मदद मिले, या इस डर से कि यदि किसी दिन मैं इस भाषा में ठीक से न बोल सकी, तो मुझे इसकी सजा मिलेगी?

मुंबई आने के बाद मुझे यह समझ में आया कि हर शहर की एक पहचान होती है, जिससे मैं अब तक अनजान थी। एक प्रवासी की नजर से देखें तो किसी ऐसे शहर में रहना बहुत मुश्किल होता है, जिसे आप 'घर' नहीं कह सकते। खासकर तब, जब आपकी भाषा अलग हो। दिल्ली में मैं अक्सर सोचती थी कि दक्षिण भारत से आए लोग उत्तर भारत में क्यों घुल-मिल नहीं पाते? पर अब जब मैं खुद एक ऐसे शहर में रहती हूं जहां के मकान मालिक मेरे ही सामने मेरी बातें एक अपरिचित भाषा में करते हैं, मैं खुद को असमंजस में फंसा हुआ पाती हूं। मुंबई में एक अनकहा नियम है - 'मराठी का सम्मान करो, नहीं तो बाहरी कहलाओ।' और बात इतनी ही नहीं है। मैंने बेंगलुरु और चेन्नै की भी ऐसी ही कई कहानियां सुनी हैं। सच कहूं तो किसी भी शहर में ढलने के लिए, उसके कुछ 'नखरे' उठाने पड़ते हैं। यहां मुझे यह भी समझ में आया कि मुंबई में लड़ाई सिर्फ 'हिंदी बनाम मराठी' की नहीं है। यह लड़ाई है- एक शहर को अपनाने की, और बदले में अपनाए जाने की। मराठी लोगों के लिए उनकी मिट्टी का हिस्सा है। जब कोई बाहर से आता है, वे चाहते हैं कि वह पहले इस मिट्टी की महत्ता को समझे।

खुद अपनी आंख से

शिखा सृष्टि

मुंबई ने मुझे सिखाया कि किसी भाषा को 'राष्ट्रभाषा' कह देना और हर कोने में उसका स्वीकृत होना - ये दो अलग-अलग बातें हैं। मैंने यह भी जाना कि जब मैं हिंदी बोलती हूं, तो मुझमें यह उम्मीद रहती है कि सामने वाला मुझे समझे। पर असल में हर व्यक्ति की 'डिफॉल्ट भाषा' अलग होती है। भाषा की बहस में जब यह पहलू खो जाता है, तो यह भारत की सांस्कृतिक विविधता के साथ अन्याय बन जाता है।

मुझे लगता है मैं दो शहरों के बीच खड़ी हूं - दिल्ली की एक हिंदी भाषी, और मुंबई की एक नई प्रवासी। सच पूछें तो असली भारत यही है - जहां हर व्यक्ति थोड़ा सा अपना छोड़ता है, थोड़ा सा दूसरे का अपनाता है। जहां भाषा केवल बोलने की चीज नहीं, बल्कि सुनने की कला भी बन जाती है। अब कहते-सुनते चार साल बीत गए हैं। चालीस और निकल जाएंगे। बस उम्मीद है कि जीवन की बाकी कठिनाइयों में भाषा एक लड़ाई नहीं, एक सहारा बने।

चलते-चलते...

कवक (Fungi) पृथ्वी के अदृश्य रक्षक हैं। वे केवल पेड़-पौधों के लिए ही महत्वपूर्ण नहीं, बल्कि जलवायु परिवर्तन से निपटने में भी अहम भूमिका निभाते हैं। हालिया अध्ययन में सामने आया है कि उनके लिए संरक्षित क्षेत्र 90% तक सिकुड़ गए हैं। चिंता जताई गई है कि अगर यह क्रम जारी रहा तो प्रकृति और मानव जीवन पर संकट बढ़ते चले जाएंगे।

रीडर्स मेल

▸ FTA से फायदा

25 जुलाई का संपादकीय 'विन विन डील' पढ़ा। लगभग साढ़े तीन साल से भारत और ब्रिटेन के बीच FTA पर चल रही बातचीत आखिर समझौते तक पहुंच गई। FTA होने से दोनों देशों के बीच अब व्यापार को और बढ़ावा मिलेगा। इस डील से न केवल रोजगार के अवसर खुलेंगे बल्कि ब्रिटेन मे भारतीय कामगारों को भी फायदा होगा। देखा जाए तो अमेरिकी राष्ट्रपति डॉनल्ड ट्रंप ने जिस तरह टैरिफ को लेकर पूरी दुनिया मे अनिश्चितता पैदा कर रखी है, उसे देखते हुए भारत के लिए यह डील बहुत ही अहम है। हालांकि भारत और अमेरिका के बीच ट्रेड डील को लेकर बातचीत जारी है। अमेरिका कृषि और डेरी उत्पादों पर खुली छूट चाहता है जबकि किसानों के हितों को देखते हुए भारत ऐसा करने के पक्ष में नहीं है। देखना होगा कि दोनों के बीच व्यापार समझौते का अंतिम रूप क्या होता है।

पैंथर तोमर, किशन गंज

▸ चीन से सावधानी

यह पत्र 25 जुलाई के लेख 'चीन ने चली चाल, भारत दिखाए चतुराई' से संबंधित है। चीन से रिश्तों के बारे में बस इतना कहा जा सकता है कि भारत कभी उस पर भरोसा नहीं कर सकता। चीन ने ब्रह्मपुत्र नदी पर बांध बनाना शुरू कर दिया है। वह अपनी मर्जी से पानी छोड़ेगा और भारत को संकट में डालेगा। भारत मॉनसून के वक्त बाढ़ से जुड़ी सूचना के लिए चीन पर निर्भर रहा है। क्योंकि ब्रह्मपुत्र नदी चीन की तरफ से ही भारत में आती है। यह नदी आगे निकलकर बांग्लादेश की ओर जाती है। जाहिर है, इस बांध का उस पर भी असर पड़ेगा, क्योंकि वहां भी लाखों लोग इस नदी पर निर्भर हैं। चिंता की बात यह भी है कि अगर कोई बड़ा भूकंप आता है और ब्रह्मपुत्र पर बन रहे बांध में कोई दिक्कत आती है तो भारत को बड़ा नुकसान झेलना पड़ सकता है।

संजीव साह, ईमेल से

[illegible]

अमर उजाला
प्रवाह
77 साल बेमिसाल
निर्भीक पत्रकारिता का आठवां दशक
स्थापना : 18 अप्रैल 1948 • आगरा
नई दिल्ली ■ शनिवार, 26 जुलाई 2025

जिन लोगों के बहकावे में आकर आप मूर्खतापूर्ण बातों पर भरोसा कर लेते हैं, वे आपसे अत्याचार भी करवा सकते हैं। -वोल्टेयर

सरकारी स्कूल और सवाल

राजस्थान के झालावाड़ में सरकारी स्कूल की इमारत का एक हिस्सा गिरने से कई मासूम बच्चों की मौत और घायल होने की घटना हृदयविदारक होने के साथ ही देश के सरकारी स्कूलों की बदहाली पर गंभीर सवाल भी खड़े करती है। कहा जा रहा है कि झालावाड़ के इस स्कूल की इमारत पहले से ही जर्जर अवस्था में थी और लगातार बारिश से इसकी हालत और भी खराब हो गई थी। स्कूल शिक्षा विभाग को निर्देश भी दिए गए थे कि जर्जर भवनों वाले स्कूलों में छुट्टी कर दी जाए, लेकिन हैरत की बात यह है कि यह स्कूल जर्जर भवनों की सूची में था ही नहीं, और इसीलिए यहां के बच्चों की छुट्टी भी नहीं की गई थी। यह स्थिति स्थानीय प्रशासन की गंभीर लापरवाही और जवाबदेही की कमी को ही दर्शाती है। बात सिर्फ झालावाड़ की नहीं है, पूरे देश में सरकारी स्कूलों का यही आलम है। खासकर ग्रामीण क्षेत्रों में स्कूलों की इमारतें जर्जर हैं, शिक्षकों की कमी है और स्वच्छ पेयजल, शौचालय और बिजली जैसी बुनियादी सुविधाओं तक का अभाव है। नई शिक्षा नीति में शिक्षा के बुनियादी ढांचे को मजबूत करने की बात कही गई थी, लेकिन झालावाड़ जैसे हादसे जमीनी स्तर पर इसके नगण्य प्रभाव को ही दर्शाते हैं। लिहाजा, सभी स्कूलों की इमारतों की नियमित व पारदर्शी जांच होनी चाहिए, जिसके लिए स्वतंत्र विशेषज्ञों की एक समिति गठित की जा सकती है, जो स्कूल भवनों की संरचनात्मक सुरक्षा का आकलन करती रहे। स्थानीय प्रशासन और शिक्षा विभाग के अधिकारियों की जवाबदेही भी तय होनी चाहिए और अगर कोई स्कूल असुरक्षित स्थिति में पाया जाता है, तो संबंधित अधिकारियों पर सख्त कार्रवाई भी होनी चाहिए। चूंकि स्थानीय लोग स्कूलों की स्थिति के बारे में बेहतर जानते हैं, स्कूलों के प्रबंधन में इनकी भागीदारी को बढ़ावा देना भी जरूरी है और प्रशासन को यह सुनिश्चित करना होगा कि इनकी शिकायतों को गंभीरता से लेकर उन पर त्वरित कार्रवाई की जाए। झालावाड़ में जो हुआ, उसे महज एक और दुर्घटना मानकर खारिज नहीं किया जा

सकता, बल्कि यह पूरी व्यवस्था की विफलता का प्रतीक है। सरकार, प्रशासन और समाज को मिलकर यह सुनिश्चित करना होगा कि हमारे बच्चे सुरक्षित स्कूलों में पढ़ें। यह एक नैतिक जिम्मेदारी तो है ही, मजबूत व शिक्षित भारत के निर्माण की पूर्व शर्त भी है।

क्या यह सांस्कृतिक अनाथों की पीढ़ी है

अगर हम यह समझेंगे कि बच्चों की परवरिश का सही तरीका सिर्फ खुलापन है, तो हम सांस्कृतिक रूप से अनाथों की एक पीढ़ी तैयार कर रहे हैं। ये लोग दुनिया से तो जुड़े होते हैं, लेकिन अपनी जड़ों से कटे होते हैं। जब तक हम अपने बच्चों को सांस्कृतिक मूल्यों को समझाने में विफल होते रहेंगे, आगरा जैसे मामले सामने आते रहेंगे।

इस साल मार्च में आगरा से दो हिंदू बहनें गायब हो गईं। शुरुआत में जो सामान्य गुमशुदगी का मामला लग रहा था, वह जल्द ही कहीं ज्यादा गंभीर, खतरनाक और परेशान करने वाले मामले में तब्दील हो गया। दोनों लड़कियों, जिनमें से एक पीएचडी स्कॉलर थी और छोटी बहन महज 18 साल की थी, को कोलकाता में खोजा गया। उत्तर प्रदेश पुलिस ने मिशन अस्मिता के तहत इस मामले को सुलझाया और धर्मांतरण की खतरनाक साजिश का खुलासा किया, जिसके तार कई राज्यों में फैले हुए हैं और जिसके अंतरराष्ट्रीय संपर्क हैं। मिशन अस्मिता योगी आदित्यनाथ सरकार द्वारा शुरू किया गया एक रणनीतिक अभियान है, जिसका उद्देश्य उन सिंडिकेटों को निशाना बनाना है, जो कमजोर हिंदू लड़कियों को अपना शिकार बनाते हैं और उन्हें कट्टरपंथ के रास्ते पर ले जाते हैं। दीपाली (अमीना) इस हद तक भटक गई थी कि उसने सोशल मीडिया पर एके 47 राइफल के साथ एक तस्वीर पोस्ट की और इस संबंध में पूछने पर उसने कथित तौर पर कहा कि यह 'धर्म का काम है।'

अद्वैता काला
पत्रकार, फिल्म कथा लेखक एवं चर्चित उपन्यासकार

यह कोई काल्पनिक कथा नहीं है। यह 2025 का भारत है। लेकिन हम आखिर इस हद तक कैसे पहुंचे? जूलॉजी में स्नातकोत्तर कर रही एक पढ़ी-लिखी युवती और उसकी 18 साल की बहन औसत मध्यमवर्गीय हिंदू परिवार से हैं। उनके पास ऐसी आर्थिक मजबूरी और अस्थिरता नहीं है कि वे ऐसे सिंडिकेट के जाल में फंस जाएं। लेकिन यह स्थिति का केवल सतही विश्लेषण है। इसका उत्तर हमें उनके हताश पिता से पहले ही मिल चुका है, जो अन्य माता-पिता को अपने बच्चों में सही धार्मिक मूल्यों को विकसित करने की चेतावनी देता है। औसत मध्यमवर्गीय परिवार के पास अपने बच्चों को सौंपने के लिए कोई बड़ी विरासत नहीं होती है, इसलिए उनका लक्ष्य होता है कि बच्चों को शिक्षा से लैस किया जाए, ताकि वे जीवन भर सुरक्षित रहें। माता-पिता को लगता है कि यही मूल्य समय की कसौटी पर खरा उतरेगा और उन्हें जीवन के उतार-चढ़ाव से उबारेगा।

मध्यम वर्ग की बेटियों को भी लड़कों की तरह ही पेशेवर रूप से योग्य बनने के लिए प्रेरित किया जाता है, ताकि उन्हें सम्मान और स्वतंत्रता से भरा जीवन जीने का विकल्प मिल सके। इस मामले में माता-पिता ने कोई गलती नहीं की थी। दीपाली (अमीना) एक कोचिंग सेंटर में पढ़ रही थी, जब उसकी मुलाकात समीना से हुई और वह उससे गहरी दोस्ती कर बैठी। समीना घर आती-जाती रहती थी और एक खुशमिजाज और धार्मिक विचारों वाली लड़की थी। चूंकि हिंदू धर्म अन्य सभी धर्मों के प्रति सम्मान रखता है, इसलिए दीपाली के माता-पिता को कोई आपत्ति नहीं थी। यहां तक कि जब समीना ने दीपाली की मां को धर्म परिवर्तन का सुझाव दिया, तो उन्हें चिंता के बजाय थोड़ी खुशी ही हुई। उन्हें इस बात का जरा भी अंदाजा नहीं था कि यह कोई सरसरी टिप्पणी नहीं थी, बल्कि उनकी बड़ी बेटी के मन में पहले से ही घर कर रही थी। बेशक इस कहानी की पृष्ठभूमि धार्मिक हो, लेकिन यह कहानी धार्मिक नहीं है, बल्कि यह उन मूल्यों की कहानी है, जो नेकदिल लोगों में भी डगमगाते हैं और जो ऐसी परिस्थितियां पैदा करते हैं। इससे पहले कि बहुत देर हो जाए, एक समाज के तौर पर हमें इनसे अपने अंदर ही लड़ना होगा।

हम एक ऐसी दुनिया में रहते हैं, जहां छवि और सफलता को प्राथमिकता दी जाती है। रिश्ते लगातार क्षणभंगुर होते जा रहे हैं। जैसे-जैसे इंटरनेट के जरिये दुनिया छोटी होती जा रही है, हम अपनी सांस्कृतिक जड़ों, अपनी सभ्यतागत पहचान और मूल्यों से दूर होते जा रहे हैं। जब हिंदू समाज यह मानता है कि 2025 में बच्चों की परवरिश का सही तरीका सिर्फ खुलापन ही है, तो हम सांस्कृतिक रूप से अनाथों की एक पीढ़ी तैयार कर रहे हैं। ये लोग दुनिया से तो जुड़े होते हैं, लेकिन अपनी जड़ों से कटे होते हैं।

युवा भले ही यह मानने से इन्कार कर दें कि उन्हें क्या करना है, पर वे एक निश्चित ढांचे की चाहत भी रखते हैं। और अक्सर ढांचे को ही नियम समझ लिया जाता है-घर लौटने की समय-सीमा, प्रेमी/प्रेमिका का न होना, पढ़ाई का समय वगैरह। ये सब ऊपर से थोपे हुए हैं, असली ढांचा हमारे भीतर से और हमारे सांस्कृतिक मूल्यों की समझ से आता है। यहां हम विफल रहे हैं और आगे भी विफल होते रहेंगे, इसीलिए आगरा जैसे मामले सामने आते हैं। और यह विडंबना ही है, क्योंकि हम एकमात्र बौद्धिक, दार्शनिक, धार्मिक व्यवस्था हैं, जिसकी हमेशा से एक आंतरिक संरचना रही है, और उसे धर्म कहते हैं। और धर्म ने हमेशा से यह आंतरिक संरचना प्रदान की है। जब किसी बच्चे में धार्मिक मूल्यों को कर्मकांडों के जरिये नहीं, बल्कि जीवन जीने के तरीके के रूप में विकसित किया जाता है, तो उनकी आंतरिक स्पष्टता ही वह दिशासूचक बन जाती है, जो जीवन को सच्ची सफलता की ओर ले जाती है।

सेवा, संकल्प, स्वाभिमान और श्रद्धा के मूल्य ऐसे कवच हैं, जो व्यक्ति को दिखावटी जीवनशैली और जहरीली विचारधाराओं से बचाते हैं। लेकिन हमने अपनी संस्कृति के इस शक्तिशाली पहलू को व्यवस्थित रूप से नजरअंदाज कर दिया है। हमने भगवद्गीता के बजाय शेक्सपियर को प्राथमिकता दी है। आधुनिक दिखने के लिए हम जलवायु परिवर्तन पर तो चर्चा करेंगे, लेकिन प्रकृति या पंचभूत पर नहीं। नतीजतन, हमारे पास एक ऐसी पीढ़ी है, जो सांस्कृतिक रूप से अनाथ है और जो छल-कपट के लिए तैयार व तत्पर है। हिंदुओं को कट्टरपंथ का मुकाबला कट्टरपंथ से करने की जरूरत नहीं है। हम एक ऐसी परंपरा से जुड़े हैं, जो हजारों वर्षों से चली आ रही है।

हमें बस अपने मूल्यों और धर्म का सक्रिय संरक्षक बनना है। पिछली पीढ़ियां गुलामी और उपनिवेशवाद के कठिन दौर में कहीं ज्यादा संरक्षक रही हैं। अब एक स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में हमारा कर्तव्य है कि हम अपनी धर्म-आधारित पहचान को बचाएं। जब एक दीपाली अमीना बन कर इतनी कट्टरपंथी हो जाती है कि वह मूर्तियों और उन हिंदू रीति-रिवाजों को बर्दाश्त नहीं कर पाती, जिनमें वह पली-बढ़ी थी, तो हमें एहसास होता है कि धर्म का प्रचार-प्रसार कितना आसान हो गया है। लेकिन कई मायनों में अब बहुत देर हो चुकी है। हमें अपनी बेटियों की सुरक्षा के लिए मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ द्वारा समय रहते उठाए गए मिशन अस्मिता जैसे कदमों की सराहना करनी चाहिए। और गहराई से यह भी स्वीकार करना चाहिए कि सुरक्षा का असली पाठ घर से ही शुरू होता है, जो धर्म नामक आंतरिक कवच में से एक है।

edit@amarujala.com

अंतरराष्ट्रीय

सीमा विवाद और वायरल ऑडियो

थाईलैंड व कंबोडिया के विवाद की जड़ें औपनिवेशिक काल से जुड़ी हुई हैं, लेकिन हालिया विवाद के पीछे प्रीह विहार मंदिर से ज्यादा शिनावात्रा का वायरल ऑडियो है।

थाईलैंड और कंबोडिया के बीच लंबे समय से जारी सीमा संघर्ष हाल में नाटकीय रूप से बढ़ गया है। 23 जुलाई को बारूदी सुरंग में विस्फोट होने से उबोन रत्चथानी प्रांत में सीमा पर गश्ती दल के पांच जवान गंभीर रूप से घायल हो गए, जो एक सप्ताह में इस तरह का दूसरा मामला था। इसके बाद दोनों देशों के कूटनीतिक संबंध खराब हो गए। दोनों पक्षों के बीच घातक गोलीबारी हुई। इस साल मई के अंत में दोनों सेनाओं के बीच हुई गोलीबारी में कंबोडिया के एक सैनिक की मौत हो गई थी। लेकिन इस संघर्ष की जड़ें 19वीं और 20वीं सदी के शुरुआती औपनिवेशिक काल से जुड़ी हैं।

दक्षिण-पूर्व एशिया में पश्चिमी शक्तियों के औपनिवेशिक हितों के विस्तार से पहले स्थानीय शासकों के बीच एक सीमाबद्ध राष्ट्र-राज्य की अवधारणा नहीं थी। इन देशों के बीच कोई स्पष्ट सीमाएं नहीं थीं। ब्रिटिश और फ्रांसीसियों ने मुख्य रूप से दक्षिण-पूर्व एशिया में राष्ट्र की अवधारणा का सूत्रपात किया तथा पहली बार थाईलैंड (तब सियाम) और कंबोडिया के बीच अधिकृत नक्शा तैयार किया।

दक्षिण-पूर्व एशिया में थाईलैंड एकमात्र ऐसा राष्ट्र है, जो कभी उपनिवेश नहीं बना, लेकिन सियामी राजाओं के अनुरोध पर नक्शा तैयार किया गया था। थाईलैंड की वर्तमान सीमाओं को 1893 की पाकनाम घटना के बाद अलग-अलग मानचित्रों और संधियों के जरिये आकार दिया गया था, उस वक्त दो फ्रांसीसी बंदूकधारी नौकाओं ने चाओ प्राया नदी तक यात्रा की और बैंकॉक को घेर लिया।

पेट्रा एल्डरमैन

उभरते राष्ट्र के रूप में अपनी संप्रभुता को बनाए रखने के लिए सियाम ने फ्रांस को अपने कई क्षेत्रीय दावे सौंप दिए। इनमें से वर्तमान कंबोडिया के कई प्रांत शामिल थे, जहां एक प्राचीन मंदिर है। फ्रांस द्वारा 1907 में बनाए गए नक्शे में इन क्षेत्रों को परिभाषित किया गया, पर उसमें काफी अस्पष्टता थी। 1953 में कंबोडिया की स्वतंत्रता के बाद यह मानचित्र कंबोडिया-थाई संबंधों में एक नाजुक मुद्दा बन गया, खासकर प्रीह विहार मंदिर का विवाद।

1954 में दक्षिण-पूर्व एशिया से फ्रांसीसियों के जाने के बाद थाईलैंड ने प्रीह विहार मंदिर पर कब्जा कर लिया। कंबोडिया इस मामले को अंतरराष्ट्रीय न्यायालय (आईसीजे) में ले गया, जहां 1962 में फ्रांसीसी मानचित्र के आधार पर मंदिर को कंबोडिया से संबंधित बताया गया, जिसे थाईलैंड ने बेमन से स्वीकार तो कर लिया, लेकिन मंदिर के आसपास के क्षेत्र को लेकर विवाद बना रहा। 2008 में यह मामला फिर भड़क उठा, जब यूनेस्को ने मंदिर को विश्व धरोहर का दर्जा दिया।

इसके बाद दोनों देशों के बीच हिंसक झड़पें शुरू हो गईं, लेकिन 2013 में अंतरराष्ट्रीय न्यायालय ने फिर से कंबोडिया के पक्ष में फैसला सुनाते हुए दोनों देशों को क्षेत्र से सेनाएं हटाने के लिए कहा। इसके बाद मामला शांत हो गया, लेकिन इस साल मई में फिर से यह विवाद उभर आया। दरअसल, थाईलैंड में थाकसिन और कंबोडिया में हुन सेन, काफी प्रभावशाली हैं और उनके बीच दो दशकों से संबंध भी अच्छे थे। लेकिन हालिया विवाद के पीछे थाकसिन की बेटी और प्रधानमंत्री पैतोंगतार्न शिनावात्रा की निजी बातचीत का ऑडियो हुन सेन द्वारा वायरल करने से इनके रिश्तों में कड़वाहट आ गई, जिससे पैतोंगतार्न की कुर्सी खतरे में आ गई, जिन्हें फिलहाल अदालत ने निलंबित कर दिया है। (द कन्वर्सेशन से)

डिजाइनरों को खतरा एआई से नहीं है, बल्कि उन्हें खतरा उन लोगों से है, जो एआई का इस्तेमाल करना जानते हैं। -कदामा रफीक

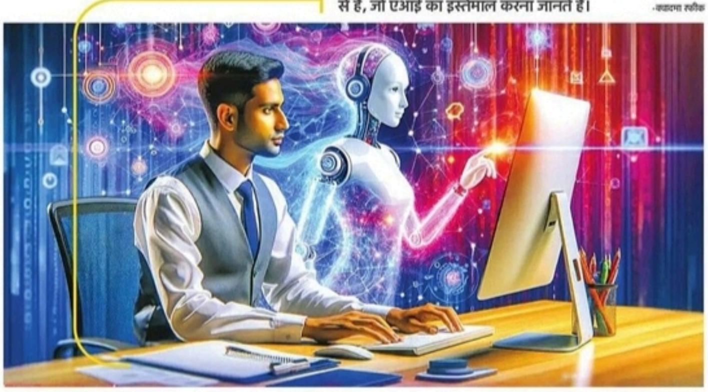

हार न मानना ही सबसे बड़ी जीत

जीवन केवल जीव विज्ञान नहीं है, यह आशा, प्रेम, और परिवार का प्रतीक है। जीवन को नए रास्ते तलाशने, बाधाओं को पार करने और दूसरों के लिए खुशियां लाने के एक अवसर के रूप में देखें।

मैंने और मेरे सहयोगी पैट्रिक स्टेप्टो और जीन पर्डी ने आईवीएफ (इन विट्रो फर्टिलाइजेशन) के माध्यम से असंभव को संभव बनाया। जीवन में सबसे महत्वपूर्ण चीज एक बच्चा है। इससे विशेष कुछ भी नहीं है। हमने न केवल एक बच्चे को जन्म दिया, बल्कि लाखों परिवारों को आशा दी। जीवन का अर्थ है सृजन, और सृजन में ही मानवता की सबसे बड़ी खुशी छिपी है। जब हमने पहली बार आईवीएफ के माध्यम से लुईस ब्राउन के जन्म को संभव बनाया, तो यह साबित हुआ कि मानव जीवन को समझने और उसे सहायता प्रदान करने की शक्ति हमारे हाथों में है। लेकिन यह शक्ति जिम्मेदारी के साथ आती है। जीवन का सम्मान करना, उसकी पवित्रता को समझना और उसे संरक्षित करना हमारा कर्तव्य है। जीवन की सुंदरता उसकी चुनौतियों में है।

रॉबर्ट एडवर्ड्स

आईवीएफ की राह आसान नहीं थी। हमें आलोचनाओं, नैतिक बहसों, और सामाजिक विरोध का सामना करना पड़ा। शुरुआत में बहुत से लोगों को समझाना पड़ा। नई रोशनी के आने से लोग अक्सर आंखें बंद कर लेते हैं। लेकिन यह रोशनी हमें जीवन के नए मार्ग दिखाती है। कुछ ने इसे अप्राकृतिक कहा, लेकिन मैंने हमेशा माना कि जीवन को बढ़ावा देना, चाहे वह प्रयोगशाला में हो या प्रकृति में, एक पवित्र कार्य है। यह मानवता के लिए एक नया रास्ता था। जीवन की शुरुआत को समझना और उसे संभव बनाना मेरे लिए एक आध्यात्मिक अनुभव था। जीवन केवल जीव विज्ञान नहीं है, यह आशा, प्रेम, और परिवार का प्रतीक है। जीवन को नए रास्ते तलाशने, बाधाओं को पार करने और दूसरों के लिए खुशियां लाने के लिए एक अवसर के रूप में देखें।

जीवन धारा

मुझे और मेरे सहयोगियों से हमेशा कहा जाता था कि हम बुद्धिमान नहीं हैं, बल्कि बहुत जिद्दी हैं। समय के साथ हमारे आईक्यू का स्तर धीरे-धीरे बढ़ता गया। जीवन में बहुत बुरे दिन आए, करीब तीन साल तक हमारी मेहनत का परिणाम शून्य आया, लेकिन हममें से किसी ने भी हिम्मत नहीं हारी। यह एक जीता-जागता उदाहरण है कि जिद्दी होने से कैसे मदद मिली। जीवन की सबसे बड़ी जीत तब मिलती है, जब हम हार नहीं मानते। हमारा कर्तव्य है कि हम जीवन को बेहतर बनाएं, और यह तभी संभव है जब हम विज्ञान, नैतिकता, और मानवता को एकसाथ जोड़ें।

चैट जीपीटी की अक्ल असल में आपकी ही है

चैट बॉट्स ज्ञान के भंडार हैं, इनका उपयोग करें, खेलें, लेकिन इसे बुद्धिमान साबित करने वाली बहसों में न पड़ें।

लीफ वेदरबी
द न्यूयॉर्क टाइम्स

AI समय

इस वसंत में, ओपनएआई के सीईओ सैम ऑल्टमैन ने चैट जीपीटी के एक नए मॉडल का विज्ञापन किया, जिसमें इसकी कहानी लिखने की क्षमता को दिखाया गया। उन्होंने चैटबॉट से कहा कि वह मेटाफिक्शन शैली (जिसमें कहानीकार व्यक्तिगत विवरणों को कहानी में बुनता है) में दुख के बारे में लिखे। चैट जीपीटी ने एक लंबी कहानी गढ़ी, जिसमें किसी प्रियजन की मौत पर शोक मनाने की तुलना 'लॉस फंक्शन' से की, जो आधुनिक कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) की तकनीकी-गणितीय शब्दावली का एक प्रचलित टर्म है। ऑल्टमैन ने इसकी तारीफ करते हुए कहा कि इतनी जटिल, फिर भी दिलचस्प कहानी कोई बेहद बुद्धिमान व्यक्ति ही लिख सकता है।

मैं साहित्य का प्रोफेसर हूं और मुझे भी लगता है कि यह सुगठित कहानी है। हालांकि मुझे नहीं पता कि यह महान साहित्य है या नहीं। इससे यह साबित नहीं होता कि चैट जीपीटी बुद्धिमान है। यह सिर्फ यही दर्शाता है कि यह नकल करने में माहिर है। एक लेख में टायलर ऑस्टिन हार्पर ने एआई को घोटाला कहा, यानी ऐसी मशीन, जो बुद्धिमत्ता का नाटक करती है। भाषाविद एमिली बेंडर और समाजशास्त्री एलेक्स हैना का मानना है कि एआई एक 'छलावा' है, और डॉ. बेंडर इसे 'मशीनी वाक्यों' का ऐसा समूह बताते हैं, जो मानवीय अर्थ के बजाय 'कृत्रिम पाठ' उत्पन्न करता है। ये आलोचनाएं इस तथ्य को नजरअंदाज करती हैं कि लोग भाषा से खेलना पसंद करते हैं, न कि सिर्फ बुद्धिमत्ता परीक्षण करते हैं। ऑल्टमैन ने अनजाने में दिखाया कि चैट जीपीटी जैसे बड़े भाषा मॉडल की लोकप्रियता का असली कारण यह है कि ये मजेदार हैं। लाखों लोग इनका उपयोग ई-मेल लिखने, ट्यूटर की नकल करने, और यहां तक कि अपने चैट-पार्टनर अवतारों से प्यार करने के लिए कर रहे हैं। आप किसी ऐसी चीज के प्रति जुनूनी नहीं हो सकते, जो मजेदार न हो। अब कैलकुलेटर को ही लीजिए, क्या कोई इससे प्यार कर सकता है? यह सोचकर कि आप किसी बुद्धिमान प्राणी से बात कर रहे हैं, जबकि आप जानते हैं कि ऐसा नहीं है, तो इस तरह खुद को धोखा देने को एलिजा इफेक्ट कहते हैं। इस टर्म का उपयोग सबसे पहले कंप्यूटर वैज्ञानिक जोसेफ वीजेनबाम द्वारा निर्मित पहले चैटबॉट से आया, जिसका यह नाम जॉर्ज बर्नार्ड शॉ के किरदार एलिजा डूलिटल के नाम पर रखा गया। वीजेनबाम को लगा कि उनका चैटबॉट एक सामान्य तरकीब से बना है, पर जब चैटबॉट का परीक्षण कर रही उनकी सचिव ने उनसे कमरे से बाहर जाने को कहा, क्योंकि उसकी बातचीत कुछ ज्यादा अंतरंग हो गई थी, तो वह हैरान रह गए।

आज एआई के आलोचकों को लगता है कि पूरी दुनिया एलिजा प्रभाव में फंसी है, लाखों लोग धोखा खा रहे हैं। लेकिन क्या होगा अगर यह प्रभाव भ्रम का संकेत न हो, बल्कि भाषा की सीमाओं से खेलने की साधारण इच्छा हो? जब मैं बच्चा था, तब वीडियो गेम्स को लेकर कहा जाता था कि ये गेम्स हमें नैतिक रूप से भ्रष्ट कर देंगे और समाज को विकृत कर देंगे। पर ऐसा कुछ नहीं हुआ और आज वीडियो गेम्स मनोरंजन का वैश्विक साधन बन गए हैं। एआई की क्षमताओं को भी मनोरंजन के रूप में देखा जा सकता है। कुछ शिक्षाविदों का एक समूह, जिसका नेतृत्व संज्ञानात्मक वैज्ञानिक एलिसन गोपनिक कर रही हैं, ने बड़े भाषा मॉडल को सांस्कृतिक तकनीक कहा है, जिसका अर्थ है कि इन बॉट्स में मानव ज्ञान, लेखन, चित्र और अन्य सांस्कृतिक उत्पादन का विशाल भंडार है। मैं इससे सहमत हूं। इन सिस्टम्स का उपयोग करना भी बहुत मनोरंजक है। लेकिन चिकित्सा, सैन्य अनुप्रयोगों, भर्ती एल्गोरिदम और अन्य क्षेत्रों में एआई का उपयोग चिंताजनक है। एआई के दुरुपयोग के जो मामले सामने आ रहे हैं, उनके लिए मुझे नहीं लगता कि एआई ही जिम्मेदार है। जब व्यवस्थाएं पहले से ही ध्वस्त हों, तब हर नई क्रांति समाधान की तरह लगती है। इसमें संदेह नहीं कि एआई मजेदार है, लेकिन क्या पूरी शिक्षा व्यवस्था एआई को सौंपी जा सकती है? क्या पूरा सरकारी तंत्र एआई के हवाले किया जा सकता है? इन सवालों के जवाब अगर आप 'नहीं' में देंगे, तो एआई का अपमान नहीं हो जाएगा। एआई को इतनी गंभीरता से लेने की जरूरत नहीं है।

हिडन लायर

यह आर्टीफिशियल न्यूरल नेटवर्क (एएनएन) का एक हिस्सा होता है, जो इनपुट और आउटपुट के बीच स्थित होता है। जब कोई डाटा सिस्टम में डाला जाता है, तो वह पहले इनपुट लेयर में जाता है। इसके बाद वह हिडन लायर से होकर गुजरता है, जहां डाटा प्रोसेसिंग (गणना, विश्लेषण) की जाती है और उसमें से जरूरी पैटर्न और जानकारी निकाली जाती है। इसका मुख्य कार्य इनपुट डाटा में छिपी हुई जटिलताओं और संबंधों को समझना होता है। यह लेयर न्यूरॉन्स से मिलकर बनी होती है, और हर न्यूरॉन कुछ न कुछ गणनाएं करता है। ये परतें मशीन को 'सीखने' में मदद करती हैं। जितने ज्यादा हिडन लायर होते हैं, मॉडल उतना ही जटिल और शक्तिशाली होता है।

©The New York Times 2025

कल्पमेधा

जो तुम्हारे पास है, उससे संतुष्ट रहो; चीजें जैसी हैं उसमें आनंदित रहो। जब तुम इस बात का अहसास कर लेते हो कि किसी भी चीज की कमी नहीं है, तो पूरी दुनिया तुम्हारी हो जाती है।
- लाओत्से

दुराग्रह का दायरा

यह विचित्र विडंबना है कि जिस दौर में विश्व भर में किसी समाज के विकास को आधुनिकता के आईने में देखने की अपेक्षा की जाती है, उसमें कई बार कुछ घटनाएं इस कसौटी पर बहुस्तरीय नाकामी को रेखांकित करती हैं। ऐसी सामाजिक प्रवृत्तियों का सिरा ढूंढ़ना मुश्किल हो जाता है, जिसमें एक ओर कोई समाज सभ्यता के मानदंडों पर अन्य के मुकाबले अपने श्रेष्ठ होने का दंभ भरे, लेकिन वहीं कुछ लोगों का व्यवहार ऐसा भी हो जो उनके दुराग्रहों और कुंठाओं से भरे होने का सूचक हो। गौरतलब है कि आस्ट्रेलिया के मेलबर्न में एक हिंदू मंदिर और दो एशियाई रेस्तरां की दीवारों को नस्लवादी भित्तिचित्रों से विकृत कर दिया गया और नस्ली नफरत फैलाने वाली बातें लिखी गईं। खबर के मुताबिक, स्थानीय पुलिस ने इस घटना की पुष्टि जरूर की और कहा कि हमारे समाज में घृणा आधारित और नस्लवादी व्यवहार के लिए बिल्कुल जगह नहीं है। यानी जिन लोगों ने नस्ली नफरत फैलाने की कोशिश की, उन्हें स्थानीय स्तर पर कोई व्यापक समर्थन नहीं है। इसके बावजूद अक्सर ऐसी घटनाएं होते रहने की खबरें बताती हैं कि वहां ऐसे तत्त्व भी हैं, जो आस्ट्रेलिया की सामाजिक विकास नीतियों में मौजूद कमियों के सूचक हैं।

भारतीय और एशियाई पहचान के लोगों को लक्ष्य बना कर मेलबर्न में इस तरह नस्लीय दुराग्रहों का प्रदर्शन कोई अकेली घटना नहीं है। पिछले कुछ वर्षों से आस्ट्रेलिया में ही इसी प्रकृति की कई घटनाएं सामने आईं। इसके अलावा, कनाडा, ब्रिटेन, अमेरिका, न्यूजीलैंड और अन्य कुछ देशों में भी भारतीय पहचान के लोगों पर नस्ली हमले हुए, घृणा से भरी टिप्पणियां की गईं और प्रत्यक्ष रूप से अपमानित करने की कोशिश की गई। ऐसे अनेक वाकये हैं, जिनमें किसी व्यक्ति ने बिना किसी कारण के सिर्फ भारतीय पहचान के आधार पर जानलेवा हमला किया। सवाल है कि ऐसी आक्रामकता का स्रोत क्या है? आखिर क्या वजह है कि हाल के वर्षों में अलग-अलग देशों में भारतीयों के प्रति इस तरह के हमलों में इजाफा हुआ है? जिस दौर में भारत अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अहम मुद्दों के मामले में अपना मजबूत दखल देता दिख रहा है, उसमें भारतीय लोगों और उनकी आस्था को चोट पहुंचाने की घटनाओं पर बात सिर्फ चिंता जाहिर करने तक क्यों सिमट कर रह जाती है? क्या इसे कूटनीतिक मोर्चे पर एक नाकामी के तौर पर देखा जाएगा कि संबंधित देशों की सरकारें अपने यहां भारतीयों के प्रति नस्लवादी नफरत फैलाने वाले तत्त्वों के खिलाफ सख्त कार्रवाई नहीं करतीं और इसीलिए ऐसी घटनाएं होती रहती हैं?

यह समझना मुश्किल है कि जिन देशों को वैश्विक स्तर पर विकसित देशों की श्रेणी में माना जाता है, वहां इस तरह की स्थिति क्यों बनी हुई है, जिसमें कुछ लोग नस्लवादी पूर्वाग्रहों से भरे हुए हैं और किसी अन्य पहचान वाले लोगों या समुदायों को कमतर मान कर उनके साथ अमानवीय तरीके से पेश आते हैं। सवाल है कि प्रतिगामी धारणाओं या मनोग्रंथियों से भरा हुआ कोई व्यक्ति या समाज सभ्य और आधुनिक होने की कसौटी पर खुद को किसी से श्रेष्ठ कैसे मान सकता है। दरअसल, नस्लवादी दुराग्रहों से भरे हुए कुछ लोग इस पहलू पर विचार करने की भी कोशिश नहीं करते और उनकी हरकतों से उपजे सवालों का जवाब दूसरे लोगों को देना पड़ता है। नस्लीय कुंठाओं में डूबे रहने के नतीजे में किसी व्यक्ति या समूह के भीतर जिस तरह की आक्रामकता और हिंसा का विस्तार होता है, उसका खमियाजा एक साथ कई पक्षों को भुगतना पड़ता है।

अपराध का दुश्चक्र

देश की राजधानी होने के नाते दिल्ली को कानून-व्यवस्था के लिहाज से अपेक्षया ज्यादा चौकस और सुरक्षित माना जाता है। मगर हकीकत यह है कि यहां आपराधिक तत्त्वों को अपनी मनमानी करने में शायद ही कोई बड़ी बाधा पेश आती है। यह बेवजह नहीं है कि दिल्ली और राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र में बिगड़ते हालात पर गुरुवार को सुप्रीम कोर्ट ने सख्त टिप्पणी की है कि अपराधी गिरोहों से कोई सहानुभूति नहीं होनी चाहिए और समाज को इनसे मुक्ति मिलनी चाहिए। अगर आम लोगों का कानून और न्याय व्यवस्था से भरोसा उठ रहा है, तो इसे गंभीरता से लेना होगा। शीर्ष अदालत की यह टिप्पणी भी गौरतलब है कि दिनदहाड़े हत्या करके भी कोई सबूतों के अभाव में बेखौफ छूट जाता है। आखिर गवाहों को सुरक्षा देने के लिए क्या किया जा रहा है? अपराध का दायरा कितना बड़ा हो गया है, इसका अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि राजधानी से सटे इलाकों में चल रहे गिरोह एक से दूसरी जगह जाकर वारदात को अंजाम देते हैं।

यह स्थिति तब है जब दिल्ली में दो सरकारें हैं। सुरक्षा व्यवस्था केंद्र के हाथों में है। फिर भी कानून का राज अगर कमजोर है, तो इसकी जिम्मेदारी तय होनी चाहिए। चिंता की बात है कि कुछ गिरोहबाज सलाखों के पीछे जाने के बाद भी अपनी गतिविधियां संचालित करते रहते हैं। ऐसे कई अपराधी कभी गिरफ्तार होते भी हैं तो उनके खिलाफ कई मामले लंबित होने पर भी आरोप तय करने में ही लंबा वक्त लग जाता है। जाहिर है, यह जांच अधिकारियों की लापरवाही का नतीजा है। दिल्ली और राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र में अपराधों पर काबू पाने के संदर्भ में सुप्रीम कोर्ट ने गवाहों की सुरक्षा के साथ-साथ त्वरित सुनवाई अदालतें बनाने की जरूरत भी बताई है। विडंबना यह है कि कानून-व्यवस्था के मोर्चे से लेकर शीघ्र न्याय सुनिश्चित कराने के मसले पर सरकारों को बहुत ज्यादा गंभीर होकर पहल करने की जरूरत महसूस नहीं होती। गिरोहबाजों से दिल्ली को छुटकारा दिलाने के लिए ठोस कदम उठाने की जरूरत है, लेकिन इसके लिए औपचारिक आश्वासनों से आगे बढ़ कर ठोस इच्छाशक्ति का प्रदर्शन करना होगा।

वैश्विक व्यापार में भारत की चुनौतियां

चीन के साथ आयात में मुख्य तौर पर भारत की ओर से पूंजीगत वस्तुओं को प्राथमिकता दी जाती है। इनका अधिकाधिक उपयोग निर्माण क्षेत्र, ऊर्जा क्षेत्र तथा परमाणु क्षेत्र में भारत के उद्योगों द्वारा किया जाता है। पिछले कई वर्षों में चीन से पूंजीगत वस्तुओं के आयात में प्रतिवर्ष चार फीसद की बढ़ोतरी देखने को मिल रही है।

पीएस वोहरा

वैश्विक व्यापार में भारत के लिए चीन चुनौती बना हुआ है। भारत का चीन के साथ व्यापारिक घाटा सौ बिलियन डालर से अधिक हो गया है। कारण है, भारत का लगातार बढ़ रहा आयात। पिछले वित्तीय वर्ष 2024-25 में कुल आयात 113.45 बिलियन डालर का था, जो 11 फीसद अधिक था। हर वर्ष हो रही इस बढ़ोतरी के कारण ही पिछले एक दशक से अधिक समय में भारत का आयात चीन से 150 फीसद से ज्यादा हो गया है। वर्ष 2012 में आयात का यह आंकड़ा 39.3 बिलियन डालर था। ऐसे में सवाल है कि क्या आयात बढ़ने का मुख्य कारण भारत की अर्थव्यवस्था के कद में हो रही बढ़ोतरी है? इस संबंध में आंकड़े ये बताते हैं कि भारत का कुल आयात पिछले एक दशक में मात्र 46 फीसद ही बढ़ा है, परंतु चीन के साथ आयात की मात्रा बहुत अधिक दर्ज हुई है। क्या चीन पर लगातार बढ़ रही निर्भरता अंतरराष्ट्रीय कूटनीति के हिसाब से भारत के लिए उचित है?

दूसरी ओर निर्यात की बात करें तो चीन के साथ भारतीय निर्यात जस का तस है। इसमें बढ़ोतरी नहीं हो रही है, बल्कि पिछले वित्तीय वर्ष 2024-25 में तो चीन को किए गए निर्यात में 15 फीसद की कमी दर्ज की गई, जो कि मात्र 16.66 बिलियन डालर था। इसी कारण चीन के साथ भारतीय व्यापारिक घाटा सौ बिलियन डालर से अधिक हो गया है। इस घाटे के आंकड़े को बहुत अधिक तवज्जो देना जरूरी है, क्योंकि एक तरफ यह भारत की चीन पर निर्भरता को दर्शाता है, तो दूसरा तरफ यह भी समझना होगा कि वर्तमान समय में भारत का रक्षा बजट करीब 78 बिलियन अमेरिकन डालर का है। यानी कि देश के कुल रक्षा बजट से अधिक का भुगतान तो भारत केवल चीन को आयात की एवज में कर रहा है। इस विषय पर भारत के नीति निर्धारकों को गंभीरता से विचार करना होगा।

चीन के साथ आयात में मुख्य तौर पर भारत की ओर से पूंजीगत वस्तुओं को प्राथमिकता दी जाती है। इनका अधिकाधिक उपयोग निर्माण क्षेत्र, ऊर्जा क्षेत्र तथा परमाणु क्षेत्र में भारत के उद्योगों द्वारा किया जाता है। पिछले कई वर्षों में चीन से पूंजीगत वस्तुओं के आयात में प्रतिवर्ष चार फीसद की बढ़ोतरी देखने को मिल रही है। दूसरी तरफ ये आंकड़ा भी बहुत चौंकाने वाला है कि पिछले वित्तीय वर्ष में विभिन्न इलेक्ट्रानिक तथा इलेक्ट्रिकल्स उत्पादों के आयात में 37 फीसद की बढ़ोतरी हुई है और ये स्पष्ट करता है कि भारतीय बाजार में स्मार्टफोन की खपत के अंतर्गत चीन आयातित कच्चे माल व कल पुर्जों का ही योगदान है। यह तथ्य भी निश्चित रूप से भारत की 'मेक इन इंडिया', 'डिजिटल इंडिया' तथा 'स्टार्टअप इंडिया' जैसी पहलों के जरिए देश को मिलने वाली आत्मनिर्भरता में बहुत बड़ी रुकावट है। चीन से अन्य मुख्य आयात में भारी मशीनरी और रसायन शामिल हैं। इन सबके बीच यह सवाल भी उठता है कि क्या भारत का चीन से आयात दूसरे मुल्कों से तुलनात्मक रूप से सस्ता है?

अब यह बात पूर्णतया स्पष्ट है कि चीन पर भारत की निर्भरता बहुत अधिक है तथा यह लगातार बढ़ती जा रही है। दोनों अर्थव्यवस्थाओं के सापेक्ष आर्थिक प्रदर्शन इस बात को साबित करते हैं कि भारत की तुलना में श्रम के अंतरराष्ट्रीय विभाजन में चीन काफी बेहतर स्थिति में है। इसी कारण विनिर्माण क्षेत्र में चीन की स्थिति अच्छी बनी हुई है। भारत के विनिर्माण क्षेत्र का अर्थव्यवस्था में अंशदान तकरीबन 15-16 फीसद से आगे नहीं बढ़ पा रहा है, जबकि वर्ष 2006 में राष्ट्रीय विनिर्माण प्रतिस्पर्धात्मक परिषद की स्थापना सरकार द्वारा मात्र इस उद्देश्य से की गई थी कि विनिर्माण क्षेत्र का अंशदान अर्थव्यवस्था में 25 फीसद के आसपास रहे। इसी तरह वर्ष 2014 में जब 'मेक इन इंडिया' की जोर-शोर से पहल की गई थी, तो भी उसका उद्देश्य विनिर्माण क्षेत्र के अंशदान को अर्थव्यवस्था में बढ़ाना ही था। इस संबंध में इसे निराशाजनक ही कहा जा सकता है कि आर्थिक नीतियों में भारत के विनिर्माण क्षेत्र को प्रोत्साहित करने के लिए जमीनी स्तर पर बहुत आमूलचूल परिवर्तन नहीं हुए। इसी का नतीजा है कि आज एक तरफ विनिर्माण क्षेत्र भारत में लगातार बढ़ रही बेरोजगारी की समस्या को दूर नहीं कर पा रहा है, तो वहीं देश में इस क्षेत्र से संबंधित मांग से जुड़ी वस्तुओं का आयात करना पड़ता है, क्योंकि घरेलू उत्पादन बहुत सीमित मात्रा में उपलब्ध है।

> यह स्पष्ट है कि चीन पर भारत की निर्भरता अब भी अधिक है। दोनों अर्थव्यवस्थाओं के सापेक्ष आर्थिक प्रदर्शन इस बात को साबित करते हैं कि भारत की तुलना में श्रम के अंतरराष्ट्रीय विभाजन में चीन काफी बेहतर स्थिति में है। इसी कारण विनिर्माण क्षेत्र में चीन की स्थिति अच्छी बनी हुई है। भारत के विनिर्माण क्षेत्र का अर्थव्यवस्था में अंशदान तकरीबन 15-16 फीसद से आगे नहीं बढ़ पा रहा है, जबकि वर्ष 2006 में राष्ट्रीय विनिर्माण प्रतिस्पर्धात्मक परिषद की स्थापना सरकार द्वारा मात्र इस उद्देश्य से की गई थी कि विनिर्माण क्षेत्र का अंशदान अर्थव्यवस्था में 25 फीसद के आसपास रहे।

दूरसंचार और इलेक्ट्रानिक उपकरणों के क्षेत्र में तो एक आम भारतीय की भी यही अवधारणा है कि इन सब के उत्पादन में आज भी भारत पर्याप्त रूप से सक्षम नहीं है तथा इनका बहुतायत में आयात चीन से ही होता है। पिछले कई वर्षों से ये भी देखने को मिला है कि भारत ने अपने निर्यात क्षेत्र को तुलनात्मक रूप से दूसरे छोटे देशों के साथ बढ़ाने की कोशिश की है, ताकि एक वैश्विक साख को स्थापित किया जा सके। यह सोच अपना एक पक्ष जरूर रखती है, परंतु चीन के साथ भारत के बढ़ते जा रहे वैश्विक व्यापारिक घाटे की कमजोर परिस्थिति से बाहर निकलने में इससे मदद नहीं मिल पा रही है।

इस बीच, ये भी देखा गया है कि भारत को चीन अपनी तरफ आकर्षित करना चाहता है। कुछ समय पूर्व चीन के एक राजदूत ने कहा था कि उनका देश भारत की कुछ खास वस्तुओं को अपने घरेलू बाजार में स्वागत करेगा। ये भारत के निर्यात को बढ़ाने का एक प्रस्ताव है। वैसे इस कथन के कई पक्ष निकलकर सामने आते हैं, जिनमें अमेरिका के राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप की ओर से हर दिन शुल्क को बढ़ाने के संबंध में दी जाने वाली धमकियों से वैश्विक स्तर पर व्यापारिक माहौल में परेशानी पैदा होने का पहलू भी विशेष तौर पर शामिल है। हालांकि, चीन और अमेरिका के बीच शुल्क के संबंध में एक सुलह हो चुकी है, परंतु इन सब के बावजूद ट्रंप ने हाल में कहा था कि ब्रिक्स समूह के अंतर्गत आने वाले देशों द्वारा अगर अमेरिकी मुद्रा डालर के विरुद्ध कोई साझेदारी की जाती है तो उन पर भी दस फीसद से अधिक अतिरिक्त शुल्क लगाया जाएगा।

इसके अलावा, बीते दिनों डोनाल्ड ट्रंप ने भारत के रूस से कच्चा तेल खरीदने पर 500 फीसद तक शुल्क लगाने की बात कही है। हालांकि, राष्ट्रपति ट्रंप के लिए इस तरह की घोषणाओं को धरातल पर उतार पाना आसान नहीं है, क्योंकि इसके दूरगामी प्रभाव हो सकते हैं और यह अमेरिका के हितों को भी प्रभावित कर सकता है। भारत को बिना किसी दबाव में आए अंतरराष्ट्रीय कूटनीति के तहत पूर्व की भांति रूस से कच्चे तेल की आवक को जारी रखना चाहिए, क्योंकि इससे घरेलू बाजार में महंगाई को काबू में रखने में मदद मिलेगी। वहीं, चीन के साथ व्यापारिक पहल करते हुए भारत को अपने निर्यात को बढ़ाने पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए, ताकि लगातार बढ़ रहे व्यापारिक घाटे को कम करने में मदद मिल सके।

स्व का मोह

मुकेश पोपली

हम मनुष्यों के पास अगर तीन वस्तुएं हैं, तब यह मानकर चलते हैं कि हम अमीर हैं। ये तीन वस्तुएं हैं, तन, मन और धन। हमारे गुरुजनों और ज्ञानियों ने अपने वचनों में हमेशा इस ओर इशारा किया है कि तन तो चौरासी लाख योनियों की यात्रा है और अगर हम मनुष्य के रूप में पृथ्वी पर हैं तो यह हमारे लिए गर्व की बात है। इस तन पर गर्व तो करना चाहिए, लेकिन इसके मोह में पड़ना ठीक नहीं। इसी प्रकार, वे यह भी फरमाते हैं कि मन चंचल है और एक अबोध शिशु के समान है। मन को काबू में रखना मुश्किल अवश्य है, लेकिन असंभव नहीं। यों भी, वह मन ही क्या, जिस पर उसके स्वामी का नियंत्रण न हो। हम मन पर काबू न होने की मजबूरी को बहाने के तौर पर इस्तेमाल तो करते हैं, लेकिन हम खूब जानते हैं कि हमारा मन हमारे भीतर के किन स्रोतों से चल रहा होता है। हम क्या करें, क्या न करें, यह अपने विवेक से तय कर सकते हैं। अब अगर हम मन पर नियंत्रण न होने का हवाला देते हैं, तो कायदे से यह एक बहाना होता है अपनी ग्रंथियों से छुटकारा हासिल न करने या कर पाने के लिए।

अब रहा धन, तो कबीर ने साफ-साफ कहा है कि, 'साईं इतना दीजिए, जा मे कुटुम समाय। मैं भी भूखा न रहूं, साधु न भूखा जाए।' पैसे, जमीन-जायदाद जैसी भौतिक वस्तुओं का घमंड रखने वालों का बुरा हाल होता ही है। हमारे ऋषिजनों ने यही बताया है। यह तो सही है कि हम मनुष्य नाम के जीव अत्यंत भाग्यशाली हैं, क्योंकि हमारे पास अन्य जीवों की अपेक्षा शरीर के एक हिस्से में दिमाग भी होता है। इस दिमाग के भरोसे हम अपने रहन-सहन, पढ़ाई-लिखाई को बेहतर बनाते हुए सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, राजनीतिक आदि क्षेत्रों में स्वयं को एक सक्षम व्यक्ति के रूप में स्थापित कर सकते हैं। प्राचीन काल में ढलती उम्र वाले बुजुर्ग लोग अपने आपको सेवा कार्यों में झोंक देते थे। इनमें से कुछ भक्ति मार्ग पर चल पड़ते थे तो कुछ मोह-माया से दूर एकांतवास में भी रहने चले जाते थे। इस तरह के सभी लोग तन से कमजोर हों, ऐसा नहीं है। मगर यह एक समांतर सच है कि कद-काठी से मजबूत लोग भी तन को स्वस्थ रखने के लिए अपने आहार का पूरा ध्यान रखते थे। आधुनिक युवा वर्ग व्यायाम करने के लिए जिम जाने की बात बड़े घमंड के साथ बताता है, जबकि घर या कहीं भी दूसरे श्रम से वह जी चुराता है। तन को गतिमान बनाए रखने के लिए स्वस्थ पर्यावरण और शारीरिक मेहनत अति आवश्यक है। इसके साथ ही शुद्धता से परिपूर्ण भोजन भी।

मन पर नियंत्रण करने का मतलब यह नहीं होता कि खुद अपनी सारी इच्छाओं के लिए सभ्य होना और उसे दबा देना आवश्यक है। सभ्य वही होगा जो अपने साथ-साथ अपने परिवार, समाज और देश के हितों के लिए निस्वार्थ भाव से कार्य करेगा। यह भी सुनिश्चित करना होगा कि हम बिना किसी प्रतिफल की चाह में अपना जीवन कैसे व्यतीत करें। दरअसल, सभ्य व्यक्ति का सबसे महत्त्वपूर्ण लक्षण है उसका परोपकारी होना। वर्तमान में प्रत्येक मनुष्य खुद को परोपकारी बताता है, लेकिन वास्तव में इस पृथ्वी पर बहुत कम लोग ही यह भावना रखते हैं। अक्सर लोग देखा-देखी पर आ जाते हैं और प्रसिद्धि की चाह में समाज को दिग्भ्रमित करते हैं। मन को नियंत्रित करने के लिए संकल्पों के साथ जीना चाहिए। अपने सामर्थ्य के अनुसार अपने मन को सही दिशा प्रदान करने के लिए अनुभवी व्यक्तियों से संपर्क और संवाद करना चाहिए। बस केवल स्वविवेक से काम लिया जाए, तो यह समझना आसान हो जाता है कि अगर कोई व्यक्ति सत्ता के ढांचे में महत्त्वपूर्ण पद पर बैठे व्यक्ति को सिर्फ खुश करने के लिए उससे प्रभावित दिखता हो, तो वह अपने आसपास के लिए एक जोखिम की तरह रहेगा।

धन संचय करना आवश्यक है, लेकिन साथ ही इसे प्राप्त करने के लिए गलत मार्ग पर चलने से बचना भी आवश्यक है। समाज में ऐसे भी अनेक धनाढ्य हैं जो समाज के उत्थान के लिए अस्पताल, विद्यालय और अनेक उपयोगी स्थलों का निर्माण कराते हैं। ऐसे लोग गरीबों को उनकी आवश्यकतानुसार भोजन, दवाइयां और अन्य सामग्री उपलब्ध कराते हैं। धन लोलुपता धोखाधड़ी को जन्म देती है और हम तरह-तरह के अपराधों में अनचाहे भी लिप्त होते चले जाते हैं। परिणामस्वरूप, एक दिन भेद खुल जाने के बाद वह धन हमारे लिए अभिशाप बन जाता है। वर्तमान में हम मानवता से दूर होते जा रहे हैं और पाखंडी आचरण में अपने आपको जकड़ते जा रहे हैं। हमारे पास चाहे जितना भी धन हो, अगर उसका सही उपयोग नहीं हो रहा है तो वह हमारे लिए बालू-मिट्टी के समान है, जिसे एक दिन हाथ से फिसल जाना है।

दरअसल, तन-मन-धन तीनों ही हमारे लिए उपयोगी हैं, लेकिन इन सबका समर्पण भाव से उपयोग हो तो श्रेष्ठ है, वरना 'मैं' में जीना एक दिन हमें सभ्य समाज से कोसों दूर कर देता है। दुर्भाग्य से हमारे समाज में 'मैं' की बीमारी से करोड़ों लोग ग्रसित हैं। हमारी 'मैं' की भावना हमें ही आहत करती है। झूठे और खोखले दावे और भय दिखाकर समाज में स्वयं को प्रतिष्ठित करने के लिए किए गए कार्यों का फल अल्पकालीन ही होता है। समाज को समर्पित कार्य बिना 'मैं' के साथ किए जाएं तो पद, सम्मान, प्रतिष्ठा भले ही न मिले, लेकिन मन को जो शांति मिलती है, वह अतुलनीय है। अगर हम इसके बिना समाज में रहना सीख लें तो हमारे जीवन में निश्चित रूप से खुशियां ही खुशियां होंगी।

दुनिया मेरे आगे

> मन पर नियंत्रण करने का मतलब यह नहीं होता कि खुद अपनी सारी इच्छाओं के लिए सभ्य होना और उसे दबा देना आवश्यक है। सभ्य वही होगा जो अपने साथ-साथ अपने परिवार, समाज और देश के हितों के लिए निस्वार्थ भाव से कार्य करेगा। यह भी सुनिश्चित करना होगा कि हम बिना किसी प्रतिफल की चाह में अपना जीवन कैसे व्यतीत करें।

हमें लिखें, हमारा पता : edit.jansatta@expressindia.com | chaupal.jansatta@expressindia.com

नीयत पर सवाल

जगदीप धनखड़ उपराष्ट्रपति के रूप में विपक्ष की आंखों की किरकिरी बने हुए थे। उनके हर कार्य को गलत ठहराने वाला विपक्ष आज उनके पक्ष में खड़ा है। उसने धनखड़ के इस्तीफे को लेकर सवालों की झड़ी लगा दी है। कांग्रेस ने दावा किया कि धनखड़ के उपराष्ट्रपति पद से इस्तीफे के पीछे स्वास्थ्य कारणों के अलावा और भी कारण हैं। कोई दो राय नहीं कि यह उन लोगों की नीयत पर भी गंभीर सवाल है, जिन्होंने उन्हें उपराष्ट्रपति पद तक पहुंचाया। हालांकि औपचारिक तौर पर कांग्रेस इसे भाजपा के भीतर का मामला बता रही है। कांग्रेस अध्यक्ष मल्लिकार्जुन खरगे ने भी कहा कि इस्तीफा क्यों और कैसे हुआ, यह भाजपा का अंदरूनी मामला है। इसमें हमें कुछ नहीं कहना। बावजूद इसके हर कुछ घंटे के अंतराल पर कांग्रेस के नेता इस्तीफे को लेकर सत्तापक्ष पर गंभीर आरोप लगाने से बाज नहीं आ रहे हैं। इस्तीफा देने से पहले धनखड़ राज्यसभा के सभापति की भूमिका का कुशलतापूर्वक निर्वहन कर रहे थे। उनका कार्यकाल कई मायनों में काफी चर्चित रहा। विपक्ष ने उन्हें कई बार निशाने पर भी लिया। अब फिलहाल यह बहस का मुद्दा बन गया है।

- युगल किशोर राही, छपरा, बिहार

संकल्प का जीवन

संकल्प शक्ति वह मानसिक ऊर्जा है जो जीवन के प्रत्येक मोड़ पर मार्गदर्शन करती है। संकल्प के बिना सफल जीवन की कल्पना अधूरी है। संकल्प शक्ति व्यक्ति को जीवन की चुनौतियों में अडिग बनाए रखती है। यह केवल लक्ष्य की इच्छा नहीं, बल्कि उस तक पहुंचने का साहस, अनुशासन और निरंतरता है। यह वही शक्ति है जो गिरने के बाद उठने, असफलता में भी आगे बढ़ने और संघर्ष को अवसर में बदलने की क्षमता देती है। संकल्प शक्ति का स्रोत आत्मबोध है। जब मनुष्य अपने जीवन के उद्देश्य को पहचान लेता है, तभी वह सच्चे संकल्प से जुड़ता है। यह शक्ति भटकाव के समय दिशा देती है और विकल्पों की भीड़ में स्पष्टता। आज जब बाहरी अस्थिरता और भीतरी भ्रम बढ़ते जा रहे हैं, तब संकल्प शक्ति वह ध्रुवतारा है, जो मन को केंद्रित करता है और कर्म को अर्थ देता है। यह शक्ति न केवल आत्म विकास का आधार है, बल्कि समाज के लिए भी प्रेरणा बन सकती है।

- अमन सिंह गौर, वाराणसी, उप्र

साझा संस्कृति

भारत ने बांग्लादेश सरकार से महान फिल्म निर्माता सत्यजीत रे के पैतृक घर को ध्वस्त करने पर रोक लगाने के लिए कहा है। यह इमारत सत्यजीत रे के दादा उपेंद्र किशोर रे चौधरी की थी। हालांकि, वहां के स्थानीय प्रशासन ने कहा कि पिछले दस वर्षों में यह इमारत जीर्ण-शीर्ण और खतरनाक हो गई थी। भारत ने इस इमारत के संरक्षण के लिए मदद का हाथ बढ़ाया है, जो बांग्लादेश के सांस्कृतिक पुनर्जागरण का प्रतीक है। इस संरचना को ध्वस्त किए बिना इसे दोनों देशों की साझा संस्कृति के प्रतीक के रूप में एक संग्रहालय में परिवर्तित किया जाना चाहिए। भारतीय फिल्म प्रेमियों की इच्छा है कि इस संरचना को संरक्षित किया जाए। इसके साथ ही पड़ोसी देशों में हमारी स्मृतियों से जुड़े प्रतीकों और अन्य इमारतों के संरक्षण पर भी हमारी सरकार को ध्यान देना चाहिए। इससे देशों के बीच सांस्कृतिक और भावनात्मक रिश्ते जुड़े रहते हैं। कुछ स्मृतियां इस तरह भी बनी रहनी चाहिए।

- संतोष एच राऊत, सातारा, महाराष्ट्र

दूरगामी निर्णय

सुप्रीम कोर्ट ने एक मामले की सुनवाई के दौरान निर्देश दिया है कि अगर कोई महिला ससुराल वालों के खिलाफ दहेज प्रताड़ना को लेकर पुलिस में रपट दर्ज कराए, तो उसके पति या रिश्तेदारों को गिरफ्तार करने में जल्दबाजी न करे। तमाम सवालों के बावजूद यह सच है कि दहेज प्रथा अब भी खत्म नहीं हुई है। आज भौतिकवाद के दौर में कुछ लालची लोगों ने इसे कुप्रथा बना दिया है। कई राज्यों में दहेज का विद्रूप चेहरा देखने को मिलता है। कई बार दिखावे में पड़ कर बेटी का पिता कंगाल हो जाता है। अगर कोई ऐसा नहीं करता है, तो समाज में संकीर्ण मानसिकता वाले लोग उसे ताना देने लग जाते हैं। ताने या निंदा से बचने के लिए कई परिवारों को लड़कियों की शादी के लिए चादर से बाहर पैर पसारने पड़ते हैं और कुछ तो कर्ज के दलदल में भी फंस जाते हैं।

- राजेश कुमार चौहान, जालंधर

राष्ट्रीय
सहारा
पटना • शनिवार • 26 जुलाई • 2025
www.rashtriyasahara.com

समझौता बनेगा संजीवनी

भारत और ब्रिटेन के बीच हुए मुक्त व्यापार समझौते (एफटीए) से दोनों देशों की अर्थव्यवस्थाओं को जबरदस्त बढ़ावा मिलने की उम्मीद है। लेकिन लगता है कि असली फायदा भारत को मिलने वाला है। भारत से 99 प्रतिशत निर्यात पर शुल्क श्रेणियां खत्म होंगी। दोनों देशों में व्यापार 34 अरब डॉलर तक बढ़ने की उम्मीद है। दोनों देशों के बीच तीन साल की बातचीत के बाद इस व्यापार समझौते को अंतिम रूप दिया गया है। समझौते पर हस्ताक्षर हो चुके हैं बस ब्रिटेन की संसद को इसे मंजूरी की औपचारिकता बाकी है। अब भारतीय वस्तुओं के लिए सभी क्षेत्रों में व्यापक बाजार पहुंच सुनिश्चित होने की उम्मीद है। व्यापार समझौते के बाद भारतीय वस्त्र, जूते, रत्न एवं आभूषण, समुद्री खाद्य और इंजीनियरिंग वस्तुओं को ब्रिटेन में बेहतर बाजार मिलेगा और

कृषि उत्पादों एवं प्रसंस्कृत खाद्य उद्योग को वृद्धि के नये अवसर मिलेंगे। समझौता भारत के युवाओं, किसानों, मछुआरों और सूक्ष्म, एमएसएमई क्षेत्र के लिए वरदान समान साबित होगा। ब्रिटेन में बने चिकित्सा और वैमानिकी उपकरण जैसे उत्पाद भारतीयों एवं उद्योगों तक किफायती कीमत पर पहुंच सकेंगे। दोनों देश एफटीए के साथ 'दोहरे अंशदान समझौते' (डीसीसी) पर भी आम सहमति के करीब हैं। इससे दोनों के सेवा क्षेत्र, खासकर प्रौद्योगिकी और वित्त, में नई ऊर्जा का संचार होगा। ब्रिटेन का भी भारतीय बाजार में अंतरराष्ट्रीय प्रतिस्पर्धियों पर बढ़त मिलेगी। ब्रिटेन पहले से ही भारत से 11 अरब पाउंड का सामान आयात करता है लेकिन भारतीय वस्तुओं पर शुल्क कम होने से ब्रिटिश उपभोक्ताओं के लिए भारतीय उत्पादों की खरीद अधिक आसान हो जाएगी। इससे ब्रिटेन को होने वाला निर्यात बढ़ेगा। दीर्घावधि में ब्रिटेन की जीडीपी में सालाना 4.8 अरब पाउंड की बढ़ोतरी होगी जिसका फायदा ब्रिटेन के हर क्षेत्र को होगा। ईयू छोड़ने (ब्रेक्जिट) के बाद ब्रिटेन के लिए यह सबसे महत्त्वपूर्ण द्विपक्षीय व्यापार समझौता है। भारत के लिए भी यह अब तक का सबसे व्यापक समझौता है। ब्रिटेन और भारत के बीच निर्यात एवं आयात करने के लिए बहुत से दस्तावेज की जरूरत भी कम हो जाएगी और प्रक्रिया बहुत सरल हो जाएगी। विश्व की पांचवीं और छठी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्थाओं के बीच हुआ यह समझौता ब्रेक्जिट के बाद ब्रिटेन को मुश्किल से निकालेगा तो भारत को भी दुनिया की तीसरी बड़ी अर्थव्यवस्था बनने का मार्ग प्रशस्त करेगा।

सहमति से संबंध की वैध उम्र

न्याय मित्र और वरिष्ठ अधिवक्ता इंदिरा जयसिंह ने सहमति से शारीरिक संबंध बनाने के लिए वैधानिक उम्र 18 वर्ष से घटा कर 16 वर्ष करने की शीर्ष अदालत से सिफारिश की है। चर्चित 'निपुण सक्सेना बनाम भारत संघ' मामले में सुप्रीम कोर्ट की सहायता करने वाली न्यायमित्र इंदिरा जयसिंह ने यौन अपराधों से बच्चों का संरक्षण अधिनियम (पॉक्सो), 2012 और आईपीसी की धारा 375 के तहत 16 से 18 वर्ष की आयु के किशोर एवं किशोरियों से जुड़ी यौन गतिविधियों का पूर्ण अपराधीकरण करने को चुनौती देते हुए अपनी लिखित प्रस्तुतियां दी हैं। दलील दी है कि वर्तमान कानून किशोरों के बीच सहमति से बनाए गए प्रेम संबंधों को अपराध मानता है, और संवैधानिक अधिकारों का उल्लंघन करता है। अपनी स्थापना के पक्ष में उन्होंने जोरदार तर्क रखा है कि कानूनी ढांचा किशोरों के बीच सहमति से बने संबंधों को गलत तरीके

से दुर्व्यवहार के बराबर मानता है तथा उनकी स्वायत्तता, परिपक्वता और सहमति देने की क्षमता को अनदेखा करता है। सहमति की आयु 16 से बढ़ा कर 18 वर्ष करने को उचित ठहराने के लिए कोई तर्कसंगत कारण या अकाट्य आंकड़ा भी नहीं है। इसके अलावा, यह भी ध्यान दिलाया है कि आपराधिक कानून (संशोधन) अधिनियम, 2013 द्वारा आयु बढ़ाए जाने से पहले 70 वर्षों से अधिक समय तक आयु सीमा 16 वर्ष (शारीरिक संबंध बनाने के लिए सहमति की) ही रही थी। यह भी ध्यान दिलाया है कि आयु बिना किसी बहस के बढ़ा दी गई और ऐसा करते समय वर्मा समिति की सिफारिश की भी अनदेखी की गई। बेशक, यह सामयिक मुद्दा है, और इसे मौजूदा परिप्रेक्ष्य में ही देखा जाना चाहिए। आजकल किशोर समय से पहले ही यौवन प्राप्त कर लेते हैं, और अपनी पसंद के रोमांटिक और यौन संबंध बनाने में सक्षम होते हैं। फिर, राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण के निष्कर्षों के साथ ही वैज्ञानिक एवं सामाजिक आंकड़ों को भी अनदेखा नहीं किया जाना चाहिए जो बताते हैं कि किशोरों में यौन रुझान असामान्य नहीं हैं। आयु संबंधी मौजूदा व्यवस्था किशोरों की सामान्य चेष्टाओं और रुझानों का अपराधीकरण करती है। यह आंकड़ा भी हतप्रभ करने वाला है कि 2017-21 के बीच 16-18 आयु वर्ग के नाबालिगों पर पॉक्सो कानून के तहत अभियोजन में 180 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई जो अन्यायपूर्ण प्रतीत होता है।

कटाक्ष/ कबीरदास

विदाई तो दे देते यारो!

भई ये तो धनखड़ जी के साथ बहुतै नाइंसाफी है। उप-राष्ट्रपति की कुर्सी गई। उसके साथ राष्ट्रपति की कुर्सी का सपना भी गया, जो उप-जी की कुर्सी पर बैठने वालों के लिए खास तौर पर रिजर्व्ड होता है। एक ही झटके में यह सब चला गया क्योंकि मोदी जी की कृपा चली गई। जैसे हाथी के पांव में सब का पांव, वैसे ही मोदी जी की कृपा में सब की कृपा। पर अब सुन रहे हैं कि धनखड़ साहब को विदाई पार्टी भी नहीं मिलेगी। धनखड़ साहब की तपस्या में इतनी क्या कमी रह गई होगी कि विदाई पार्टी भी नसीब नहीं हो रही! पेंशन तो मिलेगी या वह भी, विदाई पार्टी की तरह?

धनखड़ जी जैसे तपस्वी आज के जमाने में गिनती के ही मिलेंगे। बताइए, अगले ने क्या-क्या और कैसी-कैसी कठिन तपस्याएं नहीं कीं। पहले बंगाल में और फिर देश की राजधानी में। इज्जत-बेइज्जती के हर ख्याल को भुलाने की कठिन साधना की। अपनी रीढ़ को रबड़ बनाने की और भी कठिन साधना की। आका के सामने हाथ जोड़ कर नब्बे डिग्री का कोण बनाने की साधना की। आका के विरोधियों पर हर वक्त गुर्राने, उन्हें डराने-धमकाने, उनके मुंह बंद कराने की कठोर साधना की। हर मौके पर और बिना मौके के भी, आका की शान में कसीदे काढ़ने की अचूक साधना की। उसके बाद भी बेचारे की तपस्या में कमी रह गई! और कमी भी ऐसी कि कुर्सी कुछ-कुछ वैसे ही छिन गई, जैसे इन दिनों हंसते-खेलते नौजवानों के अचानक प्राण छिन जाने का फैशन सा चल पड़ा है। न पहले कोई लक्षण, न कोई चेतावनी, बस झटके से कुर्सी हलाक हो गई। मानसून सत्र के पहले दिन, दोपहर के बाद तक सब ठीक-ठाक था, हमेशा की तरह, पर शाम ढलते-ढलते, अभूतपूर्व से भूतपूर्व होने की खबरें आने लगीं। शुक्र है कि गोदी मीडिया वाले तपस्या की कमी की डाइग्नोसिस के विशेषज्ञ हैं। हाई कोर्ट के जजों के महाभियोग के मामले में धनखड़ जी की तपस्या की चूक पर फौरन कैमरा फोकस कर दिया। सारी दुनिया को बता दिया कि धनखड़ जी किस गलती ने मोदी जी को मजबूर कर दिया। वरना जाटों से लेकर अन्नदाता किसानों तक, न जाने किस-किस का अपमान हो गया होता। तब तो मोदी जी की ही तपस्या में कमी रह जाती।

अनमोल वचन

श्रेष्ठतम मार्ग खोजने की प्रतीक्षा की बजाय, हम गलत रास्ते से बचते रहें और बेहतर रास्ते को अपनाते रहें।

-पं. जवाहर लाल नेहरू

जनहानि और बारिश का मौसम

हाइड्रोपावर प्रोजेक्ट

वीरेन्द्र कुमार पैन्यूली

18 अगस्त, 2023 में जल विद्युत परियोजनाओं द्वारा मनमाने ढंग से पानी छोड़े जाने से जुड़े सुरक्षा मुद्दों को गंभीरता से लेते हुए एक विशेष बैठक में राज्य के तत्कालीन मुख्य सचिव प्रबोध सक्सेना ने जब अधिकारियों को बांध सुरक्षा अधिनियम, 2019 और केंद्रीय जल आयोग के 2015 के दिशा-निर्देशों का उल्लंघन कर पानी छोड़ने वाली परियोजनाओं को वैधानिक नोटिस देकर सख्त कार्रवाई के निर्देश दिए थे तो उनका ऐसा करना पूरे देश के संदर्भ में अनुकरणीय माना गया था। पानी और सामाजिक क्षेत्र में काम करने वालों ने इसे सराहा था।

असामान्य बाढ़ों और आपदाओं से जूझते हिमाचल में परियोजनाओं से छोड़े गए पानी से राज्य में सार्वजनिक और निजी संपत्तियों, सड़कों और खेती के नुकसान-जोखिम बढ़ने की भी आशंका थी। तब पाया गया कि राज्य में अस्सी प्रतिशत से ज्यादा जल विद्युत परियोजनाएं ऐसी हैं जो इन विनियमनों का पालन नहीं कर रही थीं। लगभग दो साल बाद देश में ही जल विद्युत परियोजनाओं से जनहानि के इस पहलू को बरसात में चर्चा में लाना प्रासंगिक होगा। डैम सेफ्टी बिल में बांध के गलत प्रबंधन या बांध की क्षति या टूट से नीचे के क्षेत्र में जान-माल और पर्यावरणीय तथा सामाजिक हानियों से सुरक्षा संबंधी कार्यकारी सुझाव और निर्देश हैं। हानियां बांध की ऊंचाई, भंडारण क्षमता, पानी का वेग, पानी के विभिन्न क्षेत्रों तक पहुंचने के समय, जनसंख्या आदि पर भी निर्भर करेंगी।

बिना चेतावनी पानी छोड़े जाने की देश के सर्वाधिक दुखद हादसों में से एक हिमाचल में 8 जून, 2014 में हुआ था। मंडी जिले में लारजी बांध से अचानक छोड़े गए पानी से हैदराबाद के एक इंजीनियरिंग कॉलेज के 24 छात्र-छात्राएं व्यास नदी के बढ़े तेज बहाव में बह गए थे। पूरा देश इस हादसे से हतप्रभ रह गया था। लार जी बांध परियोजना की सुरंग चार किमी. से ज्यादा लंबी है। चरम बिजली उत्पादन की जल आवश्यकता के कारण नदी लगभग सूखी दिखती है। पानी न के बराबर देख ही छात्र-छात्राएं नदी में फोटू खींच-खिंचवा रहे थे। हिमाचल प्रदेश हाई कोर्ट ने छात्र-छात्राओं की मृत्यु का कारण लार जी बांध का हत्यारा सा व्यवहार माना था। इन्हीं संदर्भों में बांध जलाशयों की निगरानी, निरीक्षण, कार्यान्वन और रखरखाव तथा चेतावनी प्रणालियों को सुचारु करने के लिए कुछ निर्देश भी तय हुए थे। इनके सही पालन पर मुख्य सचिव ने 18 अगस्त को भी जोर दिया था।

रन ऑफ रिवर हो या जलाशय आधारित, बिजली परियोजना, सबमें ज्यादा बिजली की

मांग होने या अन्य कारण लंबी-लंबी अवधि तक नदियां लगभग जलविहीन हो जाती हैं। लक्षित उत्पादन पाने के लिए रखरखाव के बाद त्वरित पानी छोड़ दिया जाता है। ऐसे में हादसे हो जाते हैं। मवेशी भी हताहत हो जाते हैं।

उत्तराखंड में उत्तरकाशी और ऋषिकेश से सालोंसाल घाटों या सूखे टापुओं में बैठे लोगों में अचानक परियोजनाओं से पानी छोड़े जाने से अफरातफरी या आम जन, छात्र और पर्यटकों के नदी में बहने के समाचार आते रहते हैं। बाहर से आए लोगों के लिए स्थानीय स्थितियां भी अनजानी होती हैं। ऋषिकेश में रिवर राफ्टिंग की दुर्घटनाओं के संदर्भ में कुछ अनुभवी विषेषज्ञ तो यह भी कह चुके हैं कि ऊपर पहाड़ों की बांध परियोजनाओं द्वारा मनमाने ढंग से पानी छोड़े जाने से ही ऐसे जोखिम बढ़े हैं क्योंकि ऐसे में अचानक सामान्य धाराओं और लहरों में भी असामान्य बदलाव हो जाता है।

उत्तरकाशी में स्थानीय बिजली परियोजना या बैराज से छोड़े गए पानी से हादसों और हानियों के बीच 2007 नवम्बर में उत्तरकाशी में स्थानीय जन धरने पर भी बैठे थे। उनकी मांग थी कि मनेरी भाली जलविद्युत परियोजना की आपदा प्रबंधन योजना और पानी छोड़ने की प्रक्रिया सार्वजनिक की जाए। हिमाचल हादसे के बाद ही झारखंड में भी बिना चेतावनी बांध से पानी छोड़े जाने के कारण पांच छात्रों को अथाह जलराशि ने लील लिया था।

मनमानापन पानी छोड़ने का ही नहीं है, पानी न छोड़ने में भी होता है। मई, 2023 में ही हिमाचल प्रदेश हाई कोर्ट ने मंडी की एक संस्था की जनहित याचिका पर विचार किया था। इसमें कहा गया था कि पंदोह और बरोत बांधों से ब्यास और ऊहल नदियों में नेशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल के 9 अगस्त, 2017 के आदेशों के अनुसार बांधों से नदियों में 15-20 प्रतिशत पानी छोड़ा जाना है। पानी न छोड़े जाने से प्रदूषण, पेयजल बीमारी की आशंका, जलचर पर असर की समस्या बढ़ी हैं। 27 मार्च, 2023 से नाममात्र का पानी छोड़ा जा रहा है। बांध वाले गलत आंकड़े दे रहे हैं। इस पर मुख्य सचिव को भी नोटिस जारी किया गया था। जून, 2013 की केदार आपदा में भी विष्णुप्रयाग बांध के सभी गेट समय पर न खोले जाने के कारण आसपास के क्षेत्र में आपदा बढ़ने के आरोप लगे थे। श्रीनगर बांध परियोजना पर भी बिना चेतावनी सारे गेटों को खोलने से श्रीनगर पर 16 जून को तबाही लाने के आरोप लगे थे।

उन्नीस सौ अस्सी के दशक में एक जनहित याचिका के परिप्रेक्ष्य में सुप्रीम कोर्ट ने टिहरी बांध को अपनी आपदा प्रबंधन कार्ययोजना बनाने को कहा था। समय आ गया है कि बाढ़ और भूस्खलनग्रस्त उत्तराखंड में केंद्र और राज्य सरकार टिहरी बांध परियोजना को अपनी आपदा प्रबंधन कार्ययोजना को सामयिक परिप्रेक्ष्य में जनता से साझा करने को कहें। जल विद्युत परियोजनाओं पर आक्रोश तब ज्यादा हो जाता है जब वे विद्युत उत्पादन के लिए ज्यादा से ज्यादा पानी जमा करने के दौरान आगे के क्षेत्रों की मौलिक जरूरतों के लिए भी पानी छोड़ने में आनाकानी करती हैं। हिमाचल शासन जैसे रुख की आवश्यकता सारे देश में महसूस की जा रही है। खासकर उत्तराखंड में। जरूरत यह भी है कि बांध जलाशय, जलविद्युत गृह और बाढ़ चेतावनियां देने वाले तंत्र में अच्छा समन्वय हो वरना होता तो यही है कि चेतावनियों के नाम पर कुछ जगह तो नदी किनारों पर परियोजना से पानी छोड़े जाने और कभी जलस्तर बढ़ने पर सावधानी बरतने के बोर्ड ही दिखते हैं लेकिन ट्रैफिक और वैसी ही अन्य ध्वनियों के कारण शायद चेतावनियां अनसुनी रह जाती हैं।

(लेख में व्यक्त विचार निजी हैं)

> समय आ गया है कि बाढ़ और भूस्खलनग्रस्त उत्तराखंड में केंद्र और राज्य सरकार टिहरी बांध परियोजना को अपनी आपदा प्रबंधन कार्ययोजना को जनता से साझा करने को कहें। जल विद्युत परियोजनाओं पर आक्रोश तब ज्यादा हो जाता है जब वे विद्युत उत्पादन के लिए ज्यादा से ज्यादा पानी जमा करने के दौरान आगे के क्षेत्रों की मौलिक जरूरतों के लिए भी पानी छोड़ने में आनाकानी करती हैं। जरूरत है कि चेतावनी तंत्र में भी अच्छा समन्वय हो

थकान, अनिद्रा, तनाव से राहत का आसान उपाय द्रोणपुष्पी

- 'द्रोणपुष्पी' ऐसा पौधा है, जो अपनी सादगी और आसानी से मिलने वाले गुणों के कारण आयुर्वेद में महत्वपूर्ण माना जाता है। इसे गुमा के नाम से भी जाना जाता है
- इस पौधे का हर हिस्सा-चाहे पत्ते हों, फूल, जड़ या तना-किसी न किसी बीमारी के इलाज में उपयोगी होता है
- अमेरिकी नेशनल लाइब्रेरी ऑफ मेडिसिन के मुताबिक, द्रोणपुष्पी का वानस्पतिक नाम ल्यूकास एस्पेरा है
- द्रोणपुष्पी के उपयोग के यूं तो कई तरीके हैं, लेकिन ध्यान रखें कि इसे आयुर्वेदिक चिकित्सक की सलाह के बिना न लें

(मीडिया इनपुट्स)

अदालत ने 2020 में कोविड फैलाने के दर्जनों आरोपियों, जो तब्लीगी जमात के सदस्य हैं, को उनके खिलाफ कोई सबूत न मिलने पर बरी कर दिया है। अदालत का फैसला दिल्ली पुलिस और मोदी सरकार, दोनों के लिए शर्म की बात है, जिन्होंने कोविड का सांप्रदायिकरण करने का प्रयास उस समय किया जब देश के तमाम लोगों की कोविड के शिकार हो जाने के अंदेशे में जान सांसत में थी। यह नफरत की पराकाष्ठा थी।

एम.के. वेणु, पत्रकार
@mkvenu1

सैनिकों का बलिदान और आमजन

कारगिल विजय दिवस **डॉ. प्रितम भि. गेडाम**

देश के वीर सैनिक देश का गौरव हैं। चाहे कैसी भी आपदा या संकट हो, वे डरते नहीं हैं; चाहे चिलचिलाती धूप हो या खून जमा देने वाली ठंड, घने जंगल हों, ऊंचे पहाड़ हों या मानसूनी तूफान, सैनिक कई स्थितियों में भूखे-प्यासे रह कर, असुविधाओं से जूझ कर, मौत को आगे देख कर भी कभी पीछे नहीं हटते, अपने कर्त्तव्य और देश की रक्षा के लिए शहीद हो जाते हैं।

1999 के कारगिल युद्ध में पाकिस्तान पर भारत की विजय के उपलक्ष्य में कारगिल विजय दिवस हर साल 26 जुलाई को मनाया जाता है। कारगिल विजय दिवस चुनौतीपूर्ण ऊंचाई वाली परिस्थितियों में लड़ने वाले जांबाज सैनिकों के साहस, वीरता और बलिदान को दर्शाता है। यह दिवस भारत की संप्रभुता और अखंडता की रक्षा के दृढ़ संकल्प का प्रतीक है। राष्ट्रीय गौरव और स्मरण का दिवस है, जो वीरता और बलिदान की कहानियों से प्रेरित करता है। गौरव की बात है कि देश की सुरक्षा सैनिकों के हाथों में महफूज है लेकिन उनकी तुलना में जब हम अपने आसपास का वातावरण देखते है तो लगता है कि क्या हम जैसे स्वार्थी लोगों के लिए देश का जवान सरहद पर तकलीफें सहता है।

नेता चुनाव के बाद 5 साल होते ही फिर जनता के बीच जाकर अभिनय कला शुरू कर देते हैं, और चुनाव खत्म होते ही पूर्व की भांति हो जाते हैं, कई नेता तो चुनाव के प्रचार के वक्त आम जनता के घर, खेत और कार्यस्थल में जाकर भी लोगों के काम में हाथ बंटाते हुए मीडिया में छाए नजर आते हैं। जनता को भोला कहे या कुछ और, जनता जिस नेता को जनप्रतिनिधि चुन कर जनकल्याण के लिए 5 साल के कार्यकाल के लिए ऊंचे-ऊंचे पद पर विराजमान करती है, अगर वह नेता योग्य नीति से जनकल्याण कार्य करने में असफल होता है तो उस नेता से जवाब पूछने से भी जनता डरती है, जिसने उस नेता को चुना होता है। कितने लोग अपने नेता, सांसद, विधायक, पार्षद या अन्य जनप्रतिनिधियों से सवाल पूछते हैं, या जवाब मांगते हैं?

नेता अपनी जिम्मेदारी और फर्ज को पूरी सत्यनिष्ठा और देशप्रेम से वीर जवानों की भांति निभाएं तब देश में कोई समस्या ही नहीं रहेगी। मैं अपने जीवन के छोटे से अनुभव को आप सभी के साथ साझा कर रहा हूं। मैं महाविद्यालयीन शिक्षा प्राप्त करने के दौरान राष्ट्रीय कैडेट कॉर्प्स का भी कैडेट रहा, तब हम छात्र सैन्य कैंप में जाकर बहुत कुछ सीखते थे, दिसम्बर की ठंड में जंगल के उस एनसीसी कैंप

में रात भर हर छात्र की ड्यूटी 2 घंटे के लिए टेंट के बाहर सुरक्षा के तौर पर लगाई जाती थी, रात के 1 बजे या 3 बजे हो छात्र को नींद से जाग कर, पूरी वर्दी पहन कर, तैयार होकर टेंट के बाहर हमें संत्री की ड्यूटी करनी पड़ती थी। 25 किमी. लगातार जंगल ट्रैकिंग करना, अपने-अपने टेंट की जमीन को रोज गोबर से पोतना, विविध स्पर्धाओं में भाग लेना। सुबह 5 बजे उठ कर, तैयार होकर रिपोर्टिंग करना, रोज बिना शिकायत के अपना पूरा काम खुद करना, तय समय पर नाश्ता, दोपहर और रात का खाना खुले घास के मैदान में बैठ कर करना। दिन भर के काम से शरीर इतना थक जाता था कि लेटते ही गहरी नींद लग जाती थी, थोड़ी सी भी गलती पर सख्त सजा मिलती थी। देश के कोने-कोने से आए छात्र अपनी विविध कला-कौशल का प्रदर्शन करते थे। सामूहिक कार्य, सद्भावना, देशप्रेम, तत्परता, निष्ठा, लगन, मेहनत, समर्पण भाव का अनूठा संगम देखने मिलता था और उसका भाग बन कर गर्व होता था। वो दिन मुझे सीखा गए कि जीवन में नियम-अनुशासन बेहद जरूरी हैं। समस्याओं की जड़ को समझने की बजाय लोग बाहरी आवरण को देख कर या झूठे दिखावे का शिकार होकर अपनी धारणाएं बना कर समस्याओं को बढ़ा देते हैं। प्रत्येक के लिए गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, उन्नत स्वास्थ्य सुविधाएं और योग्यता के अनुसार रोजगार या व्यवसाय सेवा, मजबूत देश की पहचान हैं। जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं से जुड़ी समस्याओं के प्रति जागरूक हुए बिना हम बेकार की चीजों पर ध्यान केंद्रित करते हैं, और आपस में लड़ते-झगड़ते हैं, जिनका हमारे जीवन से कोई संबंध नहीं होता। अभिभावकों को बच्चों के साथ या उनके सामने कैसा व्यवहार करना है, यह तक पता नही है। मोबाइल, सोशल मीडिया, फैशन ने बच्चों से उनका बचपन, मासूमियत छीन ली है। वीर शहीद जवानों, महापुरुषों, क्रांतिकारी देश भक्त, समाज सुधारकों, पराक्रमी राजा-महाराजाओं की प्रेरणात्मक गाथा को जानने के लिए बजाय वे फिल्मी सितारों, ऑनलाइन गेम्स, टाइम-पास मनोरंजन, फूहड़ता को देखने-जानने के लिए कीमती समय गवांते हैं। लोग स्वाद के लालच में अस्वास्थ्यकर भोजन पसंद करते हैं। आलस्य, नशाखोरी, प्रदूषण और मिलावट ने शारीरिक-मानसिक स्वास्थ्य को कमजोर कर दिया है, लेकिन लोग स्वास्थ्य को महत्त्व नहीं देते जो कि जरूरी है। देश के प्रत्येक नागरिक को अपने जीवन के कुछ साल देश सेवा के लिए सैनिक के रूप में जरूर देने चाहिए ताकि अनुशासन, देशभक्ति और कर्त्तव्यपरायणता का असल मतलब जान पाएं।

प्रेम **संत राजिन्दर**

प्रेम क्या है? यह समझने में अधिकतर लोगों को सबसे बड़ी दुविधा होती है। यह ऐसा प्रश्न है जिसके समाधान की खोज प्राचीन काल से चली आ रही है। प्रेम के बारे में कविताएं व पुस्तकें लिखी जा चुकी हैं और हर युग में दार्शनिकों ने भी प्रेम के स्वरूप की व्याख्या करने के अनेक प्रयत्न किए हैं। 'प्रेम' शब्द का प्रयोग हममें से अधिक लोग भिन्न-

भिन्न संबंधों के प्रति अपनी भावनाओं को प्रकट करने के लिए करते हैं। जैसे माता-पिता और बच्चे में प्यार होता है तो भाई-बहन और रिश्तेदारों का भी आपस में प्यार होता है। मित्रों का आपस में प्रेम होता है। इसके अलावा हमें अपने देश के प्रति भी प्रेम होता है तथा बहुत सी बार हमें अपनी संपत्ति के साथ भी लगाव होता है। पाया जाता है कि कुछ देशों में लोगों को अपने पालतू जानवरों से भी स्नेह होता है। आम तौर पर जब प्रेम के बारे में विचार किया जाता है तो हम स्त्री-पुरुष के आपसी प्रेम के बारे में सोचते हैं। हम कई बार सारी मानवजाति व समस्त सृष्टि के प्रेम के बारे में भी बात करते हैं। हर इंसानी रिश्ते या निर्जीव वस्तुओं जैसे कि अपने घर या अपनी निजी वस्तुओं के प्रति भी प्रेम का अनुभव भिन्न-भिन्न होता है, परंतु प्रेम के हर रूप में कुछ न कुछ गुण एक जैसे होते हैं। जैसे कि इस संसार की किसी वस्तु के प्रति प्रेम के मामले में उस वस्तु से मोह होता है। जिसे हम प्रेम करते हैं, उसकी हमें बहुत आवश्यकता होती है। उसके लिए हम अपने दिल में गहरा लगाव रखते हैं, और हमें डर लगा रहता है कि कहीं वह वस्तु हमसे खो न जाए। चाहे प्रेम अपने परिवार के प्रति हो या मित्रों के प्रति, चाहे प्रेमी के प्रति हो या अपने सामान व अपने देश के प्रति, उसमें प्रेम के ये गुण हमेशा मौजूद रहते हैं। प्रेम के हर अनुभव में उसका अहसास हमेशा शामिल होता है। जब हम उनके साथ हों जिन्हें हम प्यार करते हैं तो हम प्रसन्नता का अनुभव करते हैं। हम उनके साथ शांति, एकाग्रता, संतुष्टि और पूर्णता की भावना महसूस करते हैं। संत-महापुरुष हमें समझाते हैं कि इस दुनिया का बाहरी प्रेम कुछ समय के लिए ही रहता है। यदि हम सदा-सदा का प्रेम पाना चाहते हैं तो वह हमें केवल प्रभु द्वारा ही मिल सकता है। प्रभु के प्रति प्रेम को अनुभव करने के लिए हमें संपूर्ण सृष्टि के प्रति प्रेम को अपने अंदर जागृत करना होगा।

रीडर्स मेल

मोटापे का संकट

मोटापा आज केवल एक शारीरिक समस्या नहीं, बल्कि मानसिक और सामाजिक संकट का रूप ले चुका है। आधुनिक जीवनशैली, फास्ट फूड की लत और शारीरिक श्रम की कमी इसके प्रमुख कारण हैं। यह न केवल मधुमेह, उच्च रक्तचाप, हृदय रोग जैसी बीमारियों को जन्म देता है बल्कि आत्मविश्वास को भी कमजोर करता है। मोटापा धीरे-धीरे महामारी का रूप ले रहा है। चिंताजनक बात यह है कि अब यह समस्या बच्चों और किशोरों तक पहुंच गई है। लोग तात्कालिक समाधान के रूप में दवाओं का सहारा ले रहे हैं, जबकि मोटापा दवा से नहीं, संयम और अनुशासन से नियंत्रित हो सकता है। इसके लिए सबसे महत्त्वपूर्ण जबान पर नियंत्रण जरूरी है। इसके अलावा नियमित व्यायाम, संतुलित आहार, पर्याप्त नींद और तनाव प्रबंधन अनिवार्य हैं। खासकर बच्चों में आरंभ से ही स्वस्थ जीवनशैली अपनाने की शिक्षा दी जानी चाहिए। जंक फूड की जगह पौष्टिक भोजन को प्रोत्साहित किया जाए। समाज में भी जागरूकता फैलाना जरूरी है कि मोटापा केवल शरीर का बोझ नहीं बल्कि जीवनशैली की बीमारी है। इसे नियंत्रण में रखने के लिए स्वयं पर अनुशासन ही सबसे कारगर दवा है।

अमृतलाल मारू 'रवि', इंदौर

शौर्य का सम्मान

कारगिल विजय दिवस भारतीय सेना के पराक्रम की कभी न भूलने वाली विजय गाथा है। भारतीय सेना ने असीम विपरीत परिस्थितियों में चोटियों पर छिपे हुए दुश्मनों पर अद्भुत वीरता की मिसाल पेश करते हुए विजय हासिल किया। दुश्मन 14229 फीट की ऊंचाई पर छिपा हुआ था, लेकिन भारतीय जवानों ने दुश्मनों के छक्के छुड़ा दिए। यह युद्ध भारतीय सेना की बहादुरी, शौर्य, धैर्य, हिम्मत और हार न मानने के हौसले के लिए हमेशा याद किया जाएगा। दुनियाभर के इतिहास में अनेकों युद्ध का वर्णन है, लेकिन कारगिल युद्ध के समान दूसरा कोई युद्ध नहीं है। 26 जुलाई 1999 में कारगिल की चोटी पर विजय प्राप्त करने के उपरांत प्रतिवर्ष उस दिन को कारगिल विजय दिवस के रूप में मनाया जाता है।

हिमांशु शेखर, गयाजी

सावधान रहें

एसटीएफ ने गाजियाबाद में इस अवैध दूतावास का भंडाफोड़ करके एक अच्छा काम तो किया, लेकिन यह बात गले नहीं उतरती है कि कैसे सात वर्षों तक एनसीआर जैसी जगह में इस तरह का अवैध दूतावास चल सकता है। इतने वर्षों में किसी ने भी यह कोशिश नहीं की यह जानने की क्या असल में ये सभी देश हैं भी कि नहीं? बिना पड़ताल किए लोग भी लगातार हर्षवर्धन जैन के झांसे में आते रहे और अपनी खून पसीने की गाढ़ी कमाई देते रहे। हालांकि जालसाजों की हमारे देश में कोई कमी नहीं है और वह नये तरीके ईजाद करते रहते हैं मासूम लोगों को फंसाने के लिए, लेकिन हम सबको भी यह सोचने की जरूरत है कि आज के दौर में जहां सूचना और जानकारी को प्राप्त करने के तमाम संसाधन मौजूद हैं वहां हम कैसे इन के धोखे में आ सकते हैं, कमी हम सब में भी तो है कहीं न कहीं। कम से कम लोगों को यह समझने की जरूरत है कि सच्चाई कहां है? सिर्फ लालच के कारण लोग ठगे जाते हैं, यह बात हर किसी को अपने दिलोदिमाग में डालने की जरूरत है। जब तक सतर्कता नहीं रहेगी, तब तक ऐसी ठगी होती रहेगी।

बाल गोविंद, नोएडा

letter.editorsahara@gmail.com

हमें गर्व है हम भारतीय हैं

राष्ट्रीय सहारा
सहारा इण्डिया मास कम्युनिकेशन के लिए प्रकाशक एवं मुद्रक जिया काज़ी द्वारा सहारा इंडिया मास कम्युनिकेशन द्वारा हिन्दुस्तान मीडिया वेन्चर्स लिमिटेड प्रेस, मौजा-दरियापुर, पुलिस स्टेशन-शाहपुर, दानापुर, पटना से मुद्रित तथा चतुर्थ तल, सहारा इण्डिया बिहार, बेरिंग रोड क्रासिंग, पटना से प्रकाशित। स्थानीय संपादक - संजय त्रिपाठी *।

हिन्दुस्तान 1936

स्कूलों में सुरक्षा

राजस्थान के झालावाड़ जिले में एक सरकारी स्कूल की छत गिरने से बच्चों की मौत मर्माहत ही नहीं करती, गंभीर चिंता में डाल देती है। छत गिरने से करीब सात मासूमों की मौत और अनेक बच्चों का घायल होना शिक्षा तंत्र पर सवाल खड़े करता है। इसमें कोई शक नहीं कि स्कूल बच्चों के लिए दूसरे घर की तरह होते हैं। पूरे भरोसे के साथ बच्चे अपने दूसरे घर आते हैं, ताकि अपना भविष्य संवार सकें, पर भविष्य संवारने आए कुछ बच्चे फिर घर नहीं लौट पाए। सुबह करीब 8.30 बजे जब एक मंजिला इमारत की छत गिरी, तब शिक्षकों और कर्मचारियों के अलावा करीब 60 बच्चे परिसर में मौजूद थे। अगर इमारत जर्जर हालत में थी, तो वहां स्कूल किसके आदेश से चलाया जा रहा था? अगर शिक्षकों ने पहले शिकायत की थी और बड़े अधिकारियों ने इमारत को सुधारने के लिए कदम नहीं उठाए, तो यह और भी गंभीर अपराध है। ऐसी आपराधिक लापरवाही अक्षम्य है। जो भी अधिकारी स्कूलों के रखरखाव में होने वाली कमियों को नजरंदाज कर सकते हैं, उनके लिए हमारे तंत्र में कोई जगह नहीं होनी चाहिए।

कहा जा रहा है कि लगातार बारिश की वजह से छत गिरी है, लेकिन यह बहाना या तर्क खारिज करने योग्य है। यह पूछा जाना चाहिए कि बारिश अगर लगातार हो रही थी, तो झालावाड़ में कितनी इमारतें लोगों के सिर पर गिरी हैं? यह बहुत अफसोस और निंदा की बात है कि अनेक अधिकारी बहुत ही मूर्खतापूर्ण बहाना बनाकर अपने आपको जिम्मेदारी से बचा ले जाते हैं। यह भी देखने वाली बात है कि कई बच्चों की मौत हुई है, पर कोई भी शिक्षक ज्यादा घायल नहीं हुआ है। क्या शिक्षकों को पता था कि छत ढह सकती है? यह कहना ही चाहिए कि प्राथमिक रूप से यह शिक्षकों और प्रधानाध्यापक की कमी है। राज्य सरकार को पूरी कड़ाई के साथ पड़ताल करनी चाहिए और यह देखना चाहिए कि इस हादसे के लिए कौन लोग जिम्मेदार हैं? इन लोगों पर गैर-इरादतन हत्या का मुकदमा क्यों नहीं चलाया जाना चाहिए? ध्यान रहे, स्कूल की इमारत से जुड़ा यह कोई पहला हादसा नहीं है। बीते दिसंबर में ही केरल के एर्नाकुलम के उदयमपेरूर में एक स्कूल की इमारत ढही थी, हालांकि, किसी तरह की जन-हानि नहीं हुई थी। पिछले साल बारिश के दिनों में ही उत्तर प्रदेश के बाराबंकी में एक स्कूल की पहली मंजिल की बालकनी का एक हिस्सा गिरने से कम से कम 40 बच्चे घायल हो गए थे। दिल्ली से लेकर कर्नाटक तक स्कूलों और उनकी इमारतों से जुड़े हादसे होते रहे हैं।

राजस्थान के एक स्कूल में छत गिरने से हुआ हादसा हमें मजबूर करता है कि हम देश की तमाम स्कूली इमारतों के रखरखाव पर गंभीरता से ध्यान दें।

क्या हम समग्रता में अपने स्कूलों की भी रखवाली या रखरखाव नहीं कर पा रहे हैं? आधिकारिक रूप से स्कूलों की स्थिति की अगर हम बात करें, तो चिंता होती है। साल 2021 में राज्यसभा में एक सवाल के जवाब में सरकार ने बताया था कि देश में 27,099 सरकारी स्कूलों के पास उचित भवन नहीं हैं। यह भी बताया गया था कि देश में कुल 10,32,570 सरकारी स्कूल हैं, जिनमें से 2.6 प्रतिशत स्कूलों की इमारतों को लेकर शिकायत है। गौर करने की बात है कि असम में कच्ची इमारतों वाले स्कूलों की संख्या सबसे ज्यादा है, पर वहां शिक्षक और अधिकारी बच्चों की सुरक्षा को लेकर बहुत सचेत रहते हैं। काश! राजस्थान में भी बच्चों की सुरक्षा को प्राथमिकता दी जाती, तो यह हादसा न होता। मानसून का यह समय है, जब देश के तमाम स्कूली और जर्जर सरकारी इमारतों का हाल जान लेना चाहिए। स्कूली इमारतों में किसी भी तरह की टूट-फूट को तत्काल प्रभाव से ठीक करना चाहिए।

हिन्दुस्तान Hindustan | 75 साल पहले 26 जुलाई, 1950

असफल प्रयास

काश्मीर के मामले को सुलझाने के लिए सर औवन डिक्सन की मध्यस्थता में भारत-पाकिस्तान के प्रधानमंत्रियों की वार्ता पांच दिन जारी रही, किन्तु सफलता का श्रेय प्राप्त नहीं कर सकी। साढ़े सत्रह घंटों के विचार-विनिमय में हर एक मुद्दा विचार के लिए सामने न आया होगा, ऐसा नहीं मानना चाहिए। मानी जा सकती है, तो यही बात कि परस्पर विरोधी पक्ष किसी बात पर सहमत नहीं हो सके। किन्तु असफलता का जोखिम वे लेना नहीं चाहते थे, या यह कहिए कि सफल होने के लिए वे दृढ़ निश्चय हैं, इसलिए इस प्रयत्न को असफल घोषित करने के बजाय जारी रखने का निश्चय किया गया है। इसे अच्छा लक्षण भी कहा जा सकता है, और बुरा भी। अच्छा इसलिए कि सफलता की आकांक्षा छोड़ी नहीं गई है, और बुरा इसलिए कि जब सफलता की आशा ही नहीं है, तो असमंजस की स्थिति को लंबा खींचना परेशानी को आगे के लिए टालने के समान है, जिससे परेशानी का भूत बढ़ ही सकता है। जो भी हो, संतोष यही करना चाहिए कि वार्ता एकदम असफल नहीं रही।

जहां तक वर्तमान वार्ता का संबंध है, उसके अंत में प्रकाशित विज्ञप्ति बताती है कि 'कुछ सिद्धांतों के आधार पर समस्या हल करने की कोशिश की गई' और 'उन सिद्धांतों को कई तरीकों से लागू करने के प्रश्न पर विचार-विनिमय किया गया।' यही नहीं बल्कि 'बातचीत के दौरान समस्या के कुछ नये पहलू उपस्थित हुए' और इनकी 'विस्तृत रूप से जांच करना आवश्यक समझा गया।' इसका मतलब हुआ कि उन्हीं के कारण बातचीत को आगे के लिए स्थगित करना पड़ा है। वे नये पहलू क्या हैं, यह जानने का कोई जरिया नहीं है; किन्तु उपलब्ध अनुमानों से यह विश्वास करने की गुंजाइश है कि काश्मीर-मध्यस्थ का जो मुख्य कार्य लोकमत के लिए असैन्यीकरण कराना था, उसके लिए दोनों पक्ष तैयार नहीं हैं। इसके लिए कई बातें ऐसी हैं, जिन्हें बुनियादी माना जा सकता है और उन्हीं में मतैक्य नहीं है। जैसे काश्मीर के सारे प्रदेश पर काश्मीर सरकार का सार्वभौमत्व माना जाये तो सारे प्रदेश की सुरक्षा की जिम्मेदारी उसी की मानी जायेगी और उस हालत में 'आजाद काश्मीर' या पाकिस्तान ने काश्मीर के जिस प्रदेश पर कब्जा कर रखा है, उसको उससे छुड़ाकर काश्मीर सरकार के सुपुर्द करना पड़ेगा।

बहुत काम आए कारगिल के सबक

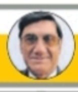

मोहन भंडारी | लेफ्टिनेंट जनरल (रिटायर्ड)

कारगिल युद्ध ने हमारी रक्षा नीति पर गहरा असर डाला। दुर्गम चोटियों पर हासिल उस जीत ने हमारे पराक्रम की छाप पूरी दुनिया पर छोड़ी। कारगिल विजय दिवस पर विशेष :

आज हम कारगिल विजय की 26वीं सालगिरह मनाने जा रहे हैं। भारतीय सेना और भारतीय सूचना एजेंसियों के लिए यह लड़ाई एक अप्रत्याशित आघात के रूप में सामने आई थी। 85 दिन तक चली वह लड़ाई क्या एक सीमित सशस्त्र जंग थी या कुछ और? आश्चर्यजनक बात यह थी कि जब भारत और पाकिस्तान, दोनों की सेनाएं लड़ रही थीं, तब भी इनके बीच पूर्ण कूटनीतिक संबंध कायम रहे।

पाकिस्तान के लिए यह 1947-48 के जम्मू-कश्मीर युद्ध, 1965 व 1971 के युद्धों के बाद एक और शर्मनाक हार थी। कारगिल की लड़ाई 12,000 से लेकर 18,000 फुट ऊंची बर्फीली चोटियों पर लड़ी गई। इन उत्तुंग पहाड़ियों के बीच विजय प्राप्त करने वाली भारतीय सेना के शौर्य और पराक्रम की चर्चा आज भी दुनिया भर में होती है। 3 मई, 1999 को पाकिस्तानी सेना ने बेन्जो व कुकुरथांग क्षेत्रों में घुसपैठ शुरू की थी। इस्लामाबाद दुनिया से झूठ बोल रहा था कि वे मुजाहिदीन/ कश्मीरी आतंकवादी हैं। लेकिन उसका झूठ तब पकड़ा गया, जब हमने परवेज मुशर्रफ की चीन से टेलीफोन-वार्ता को पकड़ लिया और पूरे विश्व को पाकिस्तानी झूठ व शर्मनाक हरकत से अवगत कराया। अब तो यह स्थापित हो चुका है कि वह घुसपैठ पाकिस्तान के तत्कालीन सेनाध्यक्ष जनरल परवेज मुशर्रफ द्वारा रची गई एक सुनियोजित सैन्य कार्रवाई का हिस्सा थी।

निस्संदेह, वह घुसपैठ हमारे सूचना तंत्र की विफलता थी। सूचना मिलने तक पाकिस्तान ने अपने लगभग 900 सैनिकों की घुसपैठ करा दी थी। उसकी नियमित सेना की उपस्थिति याल्दोर क्षेत्र में करीब 350, द्रास में 250, काकसार में 130 और मशको घाटी में 170 तक थी। यह घुसपैठ 120 किलोमीटर लंबे मोर्चों पर की गई थी। कुछ इलाकों में यह तीन से नौ किलोमीटर तक हो चुकी थी और लगातार बढ़ती ही जा रही थी।

कैबिनेट कमेटी ऑफ पॉलिसी अफेयर्स (सुरक्षा) की पहली बैठक में सर्वसम्मति से यह सुविचारित निर्णय

लिया गया कि भारतीय सेना अपनी कार्रवाई में नियंत्रण रेखा को पार नहीं करेगी और प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी ने इसकी सहमति दी। भारत के इस सैद्धांतिक रुख की विश्व भर में सराहना हुई। प्रधानमंत्री से हरी झंडी मिलने के बाद हमारी प्रतिक्रिया बहुत तेज, कड़ी और केंद्रित थी।

भारतीय सेना के हमलों की उपयोगिता पॉइंट 5140, तोलोलिंग, टाइगर हिल, पॉइंट 4875, स्तान्बा और खालुबार रेंज में मिली शानदार सफलता से साबित हुई। भारतीय सेना ने अपने बेहतर युद्ध-कौशल का परिचय दिया और दुश्मन को भारी नुकसान पहुंचाया। इस जंग में पाकिस्तान के 4,000 सैनिक मारे गए थे। यह बात स्वयं नवाज शरीफ ने मानी है। ऑपरेशन विजय की सफलता का श्रेय काफी हद तक हमारे जवानों और जूनियर अधिकारियों के धैर्य, दृढ़ संकल्प और साहस को जाता है। इस युद्ध में वायु सेना और नौसेना ने भी अहम भूमिकाएं निभाईं। आज भारतीय सेना विश्व की सर्वोत्तम सेनाओं में से एक गिनी जाती है। इसके उलट पेशेवर सेना के कायदे का पालन न करते हुए पाकिस्तानी सैनिक अपने 249 मृत व घायल सैनिकों को छोड़कर भाग खड़े हुए। भारतीय सेना ने घायल युद्धबंदियों की देखभाल की और मृतकों को सैन्य परंपरा व धार्मिक रिवाज के अनुसार दफनाया।

तोलोलिंग और टाइगर हिल की लड़ाई जीतने के बाद पूरे पाकिस्तान में खलबली मच गई थी। घबराए नवाज शरीफ 4 जुलाई, 1999 को वाशिंगटन राष्ट्रपति क्लिंटन से मिलने पहुंचे। क्लिंटन ने उन्हें दो-टूक निर्देश दिए कि पाकिस्तानी सेना नियंत्रण रेखा से तुरंत पीछे हटे। मुझे याद है, प्रधानमंत्री वाजपेयी ने नवाज शरीफ से तब कहा था कि अब उनका खेल खत्म हो गया है और वह अपने डीजीएमओ को अटारी बॉर्डर पर भेजें, ताकि उन्हें युद्ध समाप्ति के निर्देश दिए जा सकें। जनरल तौकीर जिया के नेतृत्व में पाकिस्तानी प्रतिनिधिमंडल तो आया, लेकिन इस्लामाबाद ने बाद में निर्देशों का पालन नहीं किया, वरना इस युद्ध की समाप्ति की घोषणा काफी पहले हो सकती थी। मैं वहां उपस्थित था।

कारगिल युद्ध ने भारत की रक्षा नीति पर गहरा प्र[भाव] डाला। बहुत सारे सबक हमने सीखे। सबसे पहल[ा] यही था कि हमारा आंतरिक और बाहरी सूचना तंत्र [...] उन्नत होना चाहिए। हमारी तीनों सेनाओं के [...] आपसी समन्वय भी परम आवश्यक है। इस युद्ध में [...] अपने 527 जांबाजों को खो दिया था और काफी घ[ायल] हुए थे। हमने सीखा कि क्या यह नुकसान कम हो स[कता] था? भारत ने किसी युद्ध को शीघ्रता से समाप्त कर[ने की] आवश्यकता समझी थी। कारगिल के दौरान हमें य[ह] गहराई से अनुभव हुआ कि रक्षा-आयुध के क्षे[त्र में] आत्मनिर्भरता की ओर हमें तेजी से कदम उठाना ह[ै।] तब हमने रातों-रात रूस और इजरायल से युद्धक सा[मग्री] सामान मंगाए थे। सुखद है कि आज हम रक्षा क्षे[त्र में] आत्मनिर्भरता की ओर लगातार प्रगति कर रहे हैं।

'ऑपरेशन सिंदूर' का विश्लेषण करने के बाद [...] बात तो साफ हो जाती है कि अगर कारगिल यु[द्ध के] समय हमारे पास आज जितने उन्नत हथियार होते[, तो] हमारा बहुत कम नुकसान हुआ होता। बर्फीली चो[टियों] पर सीधे हमले की नौबत ही नहीं आती। युद्ध बहुत ज[ल्दी] ही समाप्त हो जाता, जैसे इस बार ब्रह्मोस, आ[...] मिसाइल प्रणाली, उन्नत तोपों व ड्रोनों ने पूरा समी[करण] ही बदल दिया। ऑपरेशन सिंदूर में सटीक इंटेलि[जेंस,] बेहतरीन संचार प्रणाली, साइबर वारफेयर [और] आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का प्रयोग हुआ। [...] सेनाओं का अद्भुत तालमेल देखने को मिला। [...] विश्व ने एक बार फिर देखा कि भारत की सशस्त्र से[नाएं] अनूठी और सर्वश्रेष्ठ हैं। अब समय आ गया है कि [...] अपनी जीडीपी का पांच प्रतिशत रक्षा पर खर्च करे[।]

चीन-पाकिस्तान गठजोड़ से अब हमें अ[धिक] सावधान होने की आवश्यकता है। बांग्लादेश [...] उदाहरण भी हमारे सामने है। अंतरराष्ट्रीय संबंधों में [कोई] भी राष्ट्र न तो स्थायी मित्र होता है और न ही स्थायी [शत्रु।] ये रिश्ते सामरिक और राजनीतिक जरूरतों के [...] अक्सर बदलते रहते हैं। समय आ गया है कि [...] अपनी राष्ट्रीय रणनीति को लिखित रूप दे। तभी [...] अपने राष्ट्र की समग्र सामरिक नीति बना पाएंगे[।] नीति को बनाने में हमारे राजनेताओं, फौजी मह[...] और नौकरशाहों की विशेष भूमिकाएं अपेक्षित हैं। [...] विश्व का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक देश है और [...] अपना विशेष स्थान बनाकर दुनिया को [...] वास्तविकता से अवगत कराना होगा।

(ये लेखक के अपने विचा[र हैं])

लखनवी संस्कृति के संरक्षक और प्रतीक गोपाल चतुर्वेदी

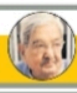

उदय प्रताप सिंह | पूर्व सांसद व कवि

वरिष्ठ साहित्यकार और राष्ट्रीय ख्याति के व्यंग्यकार गोपाल चतुर्वेदी का निधन हिंदी साहित्य के लिए बड़ी क्षति है। वह लखनऊ की सामाजिक, सांस्कृतिक और साहित्यिक गतिविधियों के केंद्र-बिंदु थे। गोपाल जी और उनकी पत्नी निशा चतुर्वेदी, दोनों अखिल भारतीय सेवा के उच्च पदों पर रहे, तो उनका जगह-जगह आना-जाना हुआ। लिहाजा, उनके पास तमाम बड़े साहित्यकारों, राजनेताओं, रचनाकारों से जुड़े रोचक संस्मरण थे। आपसी बातचीत में गोपाल जी इतने कुशल थे कि जब कभी यादों का पिटारा खोलते, तो मंत्रमुग्ध कर देते। उनके सुनाए संस्मरण ज्ञानवर्द्धक भी होते और मनमोहक भी। यही कारण है कि उनसे मिलने के बाद यह नामुमकिन था कि कोई प्रसन्न होकर न लौटा हो।

गोपाल जी के व्यंग्य देश भर की पत्र-पत्रिकाओं में नियमित तौर पर छपते रहे। उन्होंने इस विधा में नौ किताबें लिखीं, जिनमें *धांधलेश्वर, दूध का धुला लोकतंत्र, पत्थर फेंको सुखी रहो* जैसी रचनाएं खासा पसंद की गईं। मेरा उनसे व्यक्तिगत रिश्ता रहा। मैं और उनकी पत्नी, दोनों मैनपुरी से थे। इसके कारण हमारी आपस में खूब बनती थी। याद नहीं कि उनके घर से कभी बिना खाए लौटा। खाने की मेज पर शुद्ध शाकाहारी पांच-छह तरह के व्यंजन होते। मैं कहा करता कि आपकी मेज पर छप्पन भोग दिखते हैं, तो वह मुस्कराकर रह जाते थे। गोपाल जी खाने के इतने शौकीन थे कि लखनऊ की बेहतरीन से बेहतरीन दुकान की मिठाई, कुल्फी आदि वह खुद भी खाते और मेहमानों को भी खिलाते। लखनऊ जिस मेहमाननवाजी, शराफत, मीठी जुबान के लिए जाना जाता है, गोपाल चतुर्वेदी उसकी संस्कृति के संरक्षक भी थे और प्रतीक भी।

वह लखनऊ के सामाजिक जीवन की शान थे। उनके जाने के बाद यहां की साहित्यिक दुनिया कुछ और रिक्त हो गई है। स्मृति-शेष :

अपनी रचनाधर्मिता से ही नहीं, व्यक्तित्व से भी वह लोगों को खूब प्रभावित करते। बहुत नपा-तुला बोलते थे। मैं कहा करता, आपको हंसता देखकर गुस्से से भरा आदमी भी मुस्कराने लगे। वह अपने विचारों को लेकर काफी स्पष्ट थे। मुझे याद है, जब मैं उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान का अध्यक्ष था और वह भाषा संस्थान से सेवानिवृत्त हुए थे, तो मैंने उनको संस्थान की पुरस्कार चयन समिति में बतौर सलाहकार जोड़ लिया। इस समिति का काम संस्थान के पुरस्कारों के लिए, जो करीब एक करोड़ रुपये के अधिक के होते थे, लोगों के चयन में सुझाव देना था। उनके लिए यह मायने नहीं रखता कि कौन किस राजनीतिक विचारधारा से जुड़ा है। वह कहा करते थे कि बेशक हम किसी की राजनीतिक सोच से सहमत नहीं हों, लेकिन पुरस्कार उन लोगों को ही मिलना चाहिए, जिन्होंने समाज के व्यापक हित में काम किया है। फिर चाहे वह किसी भी धड़े के साहित्यकार, रचनाकार, नाटककार, कवि या राजनेता हों!

अभी तीन महीने पहले ही एक दिन उन्होंने मुझे फोन किया और 'हरकारा' में आने का आग्रह किया। यह कार्यक्रम वह अपने घर पर किया करते थे, जिसमें तमाम नामचीन लोग शामिल होना चाहते। वहां पहुंचने के बाद उन्होंने मुझे बताया कि हरकारा सम्मान वह मुझे देना चाहते हैं। कहने का मतलब है कि राजनीतिक सोच को किनारे रखकर वह साहित्यिक, सामाजिक, सांस्कृतिक अवदान को ज्यादा अहमियत देते थे। अपने करीबियों में वह अजातशत्रु कहे जाते थे। उनकी शायद ही किसी से कोई लड़ाई हुई होगी। मैंने किसी की बुराई खुद उनके मुंह से कभी नहीं सुनी और न उनकी बुराई किसी और की जुबान से। लोगों को खुद से जोड़ लेने की अद्भुत सिफत उनमें थी, जो उनकी रचनाओं में भी बखूबी झलकती है।

अभी छह दिन पहले उनकी पत्नी का देहांत हुआ था। जो लोग उन्हें नजदीक से जानते हैं, उनको पता है कि वे दोनों एक-दूसरे पर किस सीमा तक आश्रित थे। वे जीवन भर परस्पर प्रेम के बंधन में बंधे हुए साथ-साथ रहे। मैंने शायद ही किसी समारोह में उन्हें अकेले देखा हो। गोपाल और निशा, दोनों साथ-साथ आते। वास्तव में, दोनों एक-दूसरे को पूरा करते थे। संभवतः इसी कारण उन दोनों ने साथ-साथ इस संसार से विदा लेना उचित समझा। सच कहूं, तो वह लखनऊ के सामाजिक जीवन की शान थे। उनके जाने के बाद यहां की साहित्यिक दुनिया कुछ और रिक्त हो गई है।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

मनसा वाचा कर्मणा

सावन किनके लिए सुहाना

जब आसमान तपता है और धरती झुलसती है, तब सावन का महीना बरसात की झड़ी लगाकर सबके मन को तृप्त कर देता है। यह केवल मौसम का परिवर्तन नहीं, एक गहरे आध्यात्मिक अनुभव का उद्घोष है। यह वह अवस्था है, जब भीतर प्रेम की वर्षा होने लगती है और तन-मन उसमें भीगने लगता है।

धरती जेठ और आषाढ़ में जो तपस्या कर रही थी, वह सावन के आने पर आनंदित हो उठती है। तप मतलब अग्नि! पुराने समय में हठयोगी पंच अग्नि तापते थे। एक सूर्य रूप अग्नि ऊपर आकाश में है और योगी खुले आकाश के नीचे बैठकर अपने चारों ओर अग्नि जलाते थे। उस पंच अग्नि के मध्य में बैठकर अग्नि को तापते थे, मंत्रों का जाप करते थे, प्राणायाम करते थे, सूर्य उपासना करते थे। ऐसे ही, परमात्मा रूप पति से मिलने की चाह लेकर जब जीव तपस्या करे, तो इसे कहते हैं कि यह उसके साधना काल का आषाढ़ महीना है। यह उसके साधना काल का जेठ का महीना है, यानी वह समय, जिसमें साधक शरीर, इंद्रियों और मन को तपाता है।

भक्ति मार्ग में परमात्मा को पुरुष और जीव को स्त्री माना जाता है। स्त्री मतलब अहंकार रहित! यही स्त्री की पहचान है। जो जीव रूपी स्त्री परमात्मा-रूपी पति को पाना चाहे, वह इस सावन मास में अपने आपको सुधारे, अपनी कमियों को दूर करे। अपने भीतर आदर्श व्यवहार, शांति, करुणा, श्रद्धा, प्रेम, नम्रता को लेकर आए, मीठा बोले। ये सब गुण जब जीव के अंदर आ जाएं, तो कोई कारण नहीं कि कृपा नसीब न हो। एक प्रेमी, एक जिज्ञासु हंसते-मुस्कराते निर्दोष बालक जैसा हो जाता है। मन में सरलता हो, सुमिरन चलता रहे, नाम चलता रहे, नाम की धुन बनी रहे, नाम की सुरति बनी रहे, नाम की वृत्ति बनी रहे। नाम की यह रोशनी मन को आलोकित कर दे[...] जिसने अपने हृदय में राम नाम को बसा लिया है, [...] व्यक्तियों के लिए यह सावन का महीना अत्यंत सुहा[वना] हो जाता है।

पहली अवस्था में साधक तड़पता है, तप करता [है,] पुकारता है, प्रार्थना करता है, रोता भी है कि मेरे जीव[न में] जो अधूरापन है, प्रभु! यह कब पूरा होगा? फिर [...] प्रार्थना का, उस पुकार का उत्तर आता है, उसके जी[वन]

यह केवल मौसम का परिवर्तन नहीं, ए[क] गहरे आध्यात्मिक अनुभव का उद्घोष है। धरती जेठ और आषाढ़ में जो तपस्[या] कर रही थी, वह सावन के आने पर आनंदित हो उठती है।

में सत्य की अनुभूति का सावन आता है। इस अनुभू[ति में] जो प्यार, जो संतोष, जो खुशी हृदय में उमड़ती है, [...] साधक कह उठता है, अब मेरा मन और तन, सब रंग [गए] हैं, उसी प्यार में रंग गए हैं। यह संसार का झूठा रंग नह[ीं,] यह सच्चा रंग है।

यदि आपने प्रभु-प्रेम का रस भीतर नहीं चखा, प्र[भु के] सबद को अपने भीतर नहीं बसाया, तो यह सावन मह[ीना] सुहावना नहीं होगा, बल्कि कष्टकारी भी हो सकता है[।] अपने शुभ कर्मों से हम सावन माह को शुभ बना सकते [हैं।]

आनंदमूर्ति गु[रु मां]

जनरल वी पी मलिक | पूर्व सेनाध्यक्ष

यह खुशी की बात है कि कारगिल युद्ध की प्रेरणादायक कहानियां आज भी सुनाई जा रही हैं। इससे देशभक्ति और राष्ट्रीय गौरव का संचार होगा तथा चुनौतियों का सामना करने के लिए दृढ़ता, सौहार्द और वीरता की भावना जगेगी।

अनुलोम-विलोम

स्मार्टफोन और बच्चे

बच्चों को बीमार बना रहे स्मार्टफोन

जर्नल ऑफ ह्यूमन डेवलपमेंट ऐंड कैपेबिलिटीज में प्रकाशित एक अध्ययन के मुताबिक, यदि 12 साल या इससे कम उम्र में बच्चे को स्मार्टफोन दिया जाता है, तो उनमें 24 साल की उम्र तक आते-आते आत्मघाती विचार, आक्रामकता, भावनात्मक अस्थिरता और कम आत्मसम्मान की शिकायतें ज्यादा देखी जाती हैं। यह बताता है कि बच्चों के लिए सुरक्षित डिजिटल स्पेस बनाने या 13 साल से कम उम्र के बच्चों के लिए स्मार्टफोन पर प्रतिबंध लगाने जैसी नीतियों की कितनी आवश्यकता है।

इस दिशा में ऑस्ट्रेलिया ने काफी अच्छा काम किया है। उसने पिछले साल अपनी संसद से एक ऐसा विधेयक पारित किया, जिसका उद्देश्य 16 साल से कम उम्र के बच्चों को सोशल मीडिया से दूर रखना था। उसने कम उम्र के बच्चों के लिए सोशल मीडिया प्रतिबंधित कर दिया है। यह एक जरूरी कदम है, क्योंकि देखा यही गया है कि आम तौर पर बच्चों के हाथ में जब कभी फोन आता है, तो वे सोशल मीडिया से चिपक जाते हैं। ऑस्ट्रेलिया में इसलिए यह प्रतिबंधित किया गया, क्योंकि वहां एक अध्ययन में 'सोशल मीडिया के उदय और ऑस्ट्रेलियाई लोगों के मानसिक स्वास्थ्य को होने वाले नुकसान के बीच एक स्पष्ट संबंध' दिखा था। हालांकि, ऐसा नहीं है कि ऑस्ट्रेलिया में ही इस दिशा में काम हो रहा है। फ्रांस, नीदरलैंड, इटली, न्यूजीलैंड जैसे देशों ने भी स्कूलों में स्मार्टफोन पर प्रतिबंध लगा दिए हैं या फिर इसके उपयोग काफी सीमित कर दिए हैं। अमेरिका के भी कई राज्यों के स्कूलों में स्मार्टफोन के उपयोग को सीमित करने वाले कानून बनाए जा चुके हैं। ऐसे में, यह समझा जा सकता है कि अपने देश में भी ऐसी व्यवस्था की कितनी जरूरत है?

भारत की बात करें, तो यहां बच्चे-बच्चे के हाथ में स्मार्टफोन दिखता है। कई मां-बाप तो खुद बच्चों को फोन थमा देते हैं, ताकि वे उनकी परेशानी का सबब न बनें। यह एक गलत प्रवृत्ति है। इसका कितना नुकसान होता है, यह तमाम अध्ययनों में साबित हो चुका है। नए शोध में ही बताया गया है कि बच्चों को स्मार्टफोन देना उनको शराब और तंबाकू जैसे नशे का आदी बनाना है। ऐसे में, जरूरत यही है कि हम अपने बच्चों को स्मार्टफोन से दूर रखें। हमारी सरकार को भी चाहिए कि वह ऐसा नियम बनाए कि बच्चों को मोबाइल की जरूरत ही न रहे। इस मामले में सामाजिक जागरूकता भी बढ़ानी होगी और स्कूलों को यह निर्देश देना होगा कि वे बच्चों का होमवर्क मोबाइल पर भेजना बंद करें। अपने नौनिहालों को सुरक्षित रखने के लिए हमें समग्रता में कदम उठाने होंगे।

दीपक कुमार, टिप्पणीकार

शिक्षा के लिए जरूरत बन गए फोन

स्मार्टफोन के कितने फायदे हैं, यह हमने कोरोना काल में खूब देखा है। याद कीजिए वह दौर, जब एक व्यक्ति दूसरे से शारीरिक दूरी बनाकर रहता था। स्कूल, कॉलेज, दफ्तर सब बंद कर दिए गए थे। हमारा सामाजिक जीवन सीमित कर दिया गया था। बाद में जब लॉकडाउन हटा, तब भी एक-दूसरे से दूरी बनाना हमारी मजबूरी थी। ऐसे समय में यह स्मार्टफोन ही था, जो सभी का सहारा बना। बड़े ही नहीं, छोटे-छोटे बच्चों को भी घर में रुकने में दिक्कतें नहीं आईं। बाद में स्कूलों ने जब ऑनलाइन क्लास शुरू किए, तो स्मार्टफोन की काफी जरूरत पड़ी। अगर बच्चों को स्मार्टफोन नहीं दिया जाता, तो उनकी पढ़ाई-लिखाई बंद हो चुकी होती। तब भारत शिक्षा के मामले में कितना पिछड़ गया होता, इसकी कल्पना ही की जा सकती है।

स्मार्टफोन शिक्षा और मनोरंजन ही नहीं, बच्चों को आपात स्थिति में अपने माता-पिता से संपर्क करने और सामाजिक कौशल विकसित करने के लिए भी आवश्यक हैं। ऐसे वक्त में, जब छोटे-छोटे बच्चे भी अपराधियों के हाथों सुरक्षित नहीं हैं, तो यह स्मार्टफोन ही है, जिससे माता-पिता कुछ हद तक निश्चिंत रहते हैं, क्योंकि उन्हें यह भरोसा होता है कि यदि बच्चे पर कोई मुश्किल आएगी, तो स्मार्टफोन की मदद से वह तुरंत मदद मांग सकेगा। अब तो फोन में एक से बढ़कर एक फीचर आने लगे हैं। कई ऐप ऐसे हैं, जो खुद को निखारने में बच्चों की मदद करते हैं। ऐसे बच्चे स्मार्ट होते हैं और तमाम बच्चों में अलग से अपनी पहचान बनाते हैं। लिहाजा, स्मार्टफोन से बच्चों की सुरक्षा अधिक होती है और नुकसान कम।

हां, यह सही है कि लत हर चीज की बुरी होती है और यह खतरा स्मार्टफोन के साथ भी है। इसलिए जरूरी है कि इसका सीमित उपयोग किया जाए। बच्चों के लिए भी इसे प्रतिबंधित करने से बचना चाहि[ए।] इसके बजाय माता-पिता की निगरानी [में] इसका इस्तेमाल होना चाहिए। वैसे भी, यह इंसानी मनोवृत्ति है कि जिस चीज [को] जितना अधिक छिपाया जाता है, उसके प्रति हमारी उत्सुकता उतनी अधिक ब[ढ़ती] है। स्मार्टफोन के साथ भी यही हो सकत[ा] है। ऐसे में, यदि बच्चों के हाथों में हम इ[से] जाने से जबरन रोकेंगे, तो बच्चे छिपक[र] इसका इस्तेमाल कर सकते हैं। इसलिए [...] इसका इस्तेमाल सीमित करें। यहां ज्या[दा] जिम्मेदारी अभिभावकों को लेनी चाहि[ए।] वे अपने बच्चों को पर्याप्त समय दें। आमतौर पर यही देखा जाता है कि अकेलेपन में बच्चे मोबाइल की ओर अधिक आकर्षित होते हैं। तो, उनको मोबाइल दीजिए, लेकिन साथ में रहक[र] उनको अकेले में स्मार्टफोन देखने की अनुमति नहीं दीजिए।

निधि कुमारी, टिप्पणी[कार]